भीतर

4 चुनाव सर्वेक्षण का धोखा

चौथी दुनिया

दिल्ली 12 अप्रैल 2009

हिन्दी का पहला साप्ताहिक अखबार

11 विचारकों से दूर रहना

9 दहशत का दूसरा नाम सलवा जुडुम

14 देश भर में सनातन संत-सूफ़ी यात्रा

19 सुरक्षा की क़ीमत पर अरबों का तमाशा

मूल्य 20 रुपये

ये आजमगढ़ है, आतंकगढ़ नहीं

"अविभाजित उत्तर प्रदेश के किस जनपद को आतंकियों के एक प्रजनन स्थल के नाम से कलंकित किया जाने लगा है?

(ए) आजमगढ़
(बी) अलीगढ़
(सी) पिथौरागढ़
(डी) प्रतापगढ़"

एक शहर की पहचान को ख़त्म करने की साज़िश से पर्दा उठाती रपट

यह सवाल 22 फरवरी 2009 को हुई उत्तरप्रदेश लोकसेवा आयोग की परीक्षा में पूछा गया था, जिसके परिणामस्वरूप तीस हज़ार भावी नौकरशाहों को उत्तीर्ण होकर उत्तरप्रदेश के प्रशासन को संभालना है. यह सवाल बताता है कि आयोग ऐसे नौकरशाह चाहता है, जो हर हत्या को एनकाउंटर कहे.

पिछले कुछ सालों में आजमगढ़ की ऐसी छवि बनाने की कोशिशें तेज़ हुई हैं, और यूपीपीएससी के लिए तैयार किया गया ये सवाल इन कोशिशों को वैधता प्रदान कर रहा है. हालांकि विरोध के बाद आयोग ने कुछ लोगों को ब्लैक-लिस्टेड कर सवाल को भले ही हटा दिया, लेकिन उससे जो राजनीति होनी थी, वह हो गई. क्योंकि हटाए गए इस सवाल के रहस्य को सुलझाने की ज़िम्मेदारी एक रियलिटी शोज ने उठाई, जहां पूछा गया कि किस प्रश्न को संघ लोक सेवा आयोग ने हटाया? साफ है कि ऐसी कोशिशें बड़ी आसानी से अपना काम कर जाती हैं और बाद में लोगों के दिमाग़ से उतर भी जाती हैं.

आजमगढ़ में मानवाधिकार संगठनों के प्रदर्शनों की तस्वीरें

आजमगढ़ अब अपनी कहानी खुद कहना चाहता है, क्योंकि उसे मीडिया पर भरोसा नहीं रह गया है. मीडिया क्या कर सकता है, इसको आजमगढ़ के लोग बाटला हाउस में देख चुके हैं. 'सांप्रदायिकता व अफवाह फैलाने वाले पत्रकारों से अपील है कि कृपया आजमगढ़ न आएं' – आजमगढ़ में लगाए गए इस तरह के बैनरों से इस शहर की भावनाएं समझी जा सकती हैं. आजमगढ़ के लोगों ने देखा है कि किस तरह पुलिस ने कचहरी धमाकों का आरोपी बता कर आजमगढ़ के जिस तारिक की बाराबंकी से गिरफ्तारी 22 दिसंबर 2007 को दिखाई, उसे दसे दिन पहले ही 12 दिसंबर को उठा लिया गया था. तारिक के परिवार वालों ने गुमशुदगी की रिपोर्ट भी दर्ज करवाई थी. लेकिन मीडिया पुलिस की ज़बान बोल रहा था, और लिख रहा था – 'आतंक से पुराना है आजमगढ़ का रिश्ता'. या फिर 'आ' से आतंकवाद 'आ' से आजमगढ़.

तारिक की रिहाई के लिए चल रहे आंदोलन के दबाव में जहां यूपी सरकार को न्यायिक जांच बैठानी पड़ी, वहीं आजमगढ़ से शुरू हुई यह मुहिम आतंकवाद के नाम पर पकड़े गए निर्दोष युवकों के आंदोलन की आवाज़ बन गई. पांच महीने बीत जाने के बाद भी जब संदेहास्पद बाटला हाउस एनकाउंटर की पोस्टमार्टम रिपोर्ट जारी नहीं की गई, तो सूचना के अधिकार के तहत पूछे जाने पर दफा 81 के तहत सूचना पर अदालती प्रतिबंध की झूठी सूचना दी गई. हालांकि न्यायालय ने कोई पाबंदी नहीं लगाई है. ये सब हथकंडे सिर्फ इसलिए, क्योंकि मारे गए साजिद और आतिफ के जिस्म पर लगी गोलियां इशारा करती हैं कि उनकी ठंडे दिमाग़ से नृशंस हत्या की गई है. रहा सवाल मोहन चंद्र शर्मा का, जिन पर सीबीआई ने अलबद्र नाम के फर्जी आतंकी संगठन के नाम पर दो युवकों को फर्जी तरीके से फंसाने का आरोप लगाया था, तो उनकी शहादत पर उठ रहे सवालों पर सरकार के पास बगलें झांकने के सिवाय कुछ नहीं है.

बाटला हाउस प्रकरण पर राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के अध्यक्ष जस्टिस राजेंद्र बाबू यहां तक कह चुके हैं कि वह समानांतर सरकार नहीं चला सकते और उनके बस में बहुत सारी चीज़ें नहीं हैं. वह कुबूल करते हैं कि सरकार से टकराव को लेकर वह कोई तहकीकात नहीं कर सकते हैं. उनका साफ कहना है कि उत्तर भारत और गुजरात की सरकारें उनकी बात नहीं मानती. यहां ग़ौरतलब है कि धमाके चाहे जहां भी हों, उनके तार गुजरात से जोड़ कर धमाकों के कथित गुनहगारों को गुजरात पुलिस के हवाले ही किया जाता है, जिसे महज संयोग नहीं माना जा सकता.

पांच महीने बीत जाने के बाद भी जब संदेहास्पद बाटला हाउस एनकाउंटर की पोस्टमार्टम रिपोर्ट जारी नहीं की गई, तो सूचना के अधिकार के तहत पूछे जाने पर दफा 81 के तहत सूचना पर अदालती प्रतिबंध की झूठी सूचना दी गई. हालांकि न्यायालय ने कोई पाबंदी नहीं लगाई है.

इक्कीसवीं सदी के शुरुआती साल में जब यूपी में भाजपा सरकार थी, तो आजमगढ़ से पहला पाकिस्तानी जासूस पकड़ा गया, जो आज ससम्मान रिहा हो चुका है. ससम्मान रिहाई के बाद भी सामाजिक अस्वीकृति के चलते आतंकवादी होने का ठप्पा नहीं हट पाया. इसके बाद क्या था–सिलसिला शुरू हो गया और हालात आज हमारे सामने हैं. यह पूरा वाकया अंग्रेज़ों के उस कानून की याद दिलाता है, जिसके तहत किसी जाति या क्षेत्र विशेष को अपराधी घोषित करके उनका संहार करते थे, जिसको आसानी से वैधता मिल जाती थी. हर घटना के बाद आसानी से पाकिस्तान का नाम जोड़ देने वाली सरकारों और मीडिया पर पड़ोसी देशों के दबाव के चलते लंबे समय से देश के अंदर ही ऐसी जगह की ज़रूरत थी, जो पाकिस्तान या बांग्लादेश का स्थानापन्न बन सके. जो यह साबित कर सके कि हिंदुस्तान का मुसलमान सिर्फ इस्लामिक आतंकवाद का औज़ार नहीं है बल्कि वह खुद इसे स्थापित करने के लिए तंजीमें बना रहा है. गुजरात के पुलिस कमिश्नर पीसी पांडे ने गुजरात में हुए धमाकों के लिए इंडियन मुजाहिद्दीन को ज़िम्मेदार बताया था. उन्होंने इसके पीछे जो तर्क दिया था, वह यह था कि सिमी ने अपने नाम के आगे से एस और पीछे से आई हटा कर आईएम यानी इंडियन मुजाहिद्दीन बना लिया है. आईएम को 'लांच' करने वाले ये वही पीसी पाण्डे हैं, जिन्हें कई मानवाधिकार संगठनों व नागरिक समाज ने गुजरात के मुसलमानों के नरसंहार में लिप्त पाया है तथा जिन्हें उनकी इसी निख़ के लिए गुजरात सरकार ने डीजीपी बनाया. आजमगढ़ इसके लिए सबसे मुफीद था, क्योंकि आज आतंकवादी की पहचान बताने वाले जो भी कारक हैं, वे सब यहां अच्छी–खासी मात्रा में मौजूद हैं. मसलन यहां पर पाकिस्तान और बांग्लादेश की तरह ही इस्लाम को मानने वाले अच्छी–खासी संख्या में हैं. यहां को ज़्यादातर लोगों को खाड़ी देशों में काम मिलने के चलते यहां पर भारी मात्रा में पैसा आया है, जिससे वर्गीय आधार पर देखें तो मुस्लिम समाज के अंदर ही दो तरह की प्रवृत्तियां विकसित हुई हैं.

एक तरफ यहां बड़े पैमाने पर मदरसे उग आए हैं, जिनमें ग़रीब परिवारों के बच्चे अपने परंपरागत दायरे में रहते हुए पढ़ते हैं, वहीं दूसरी ओर धनाढ्य तबक़े में तकनीकी शिक्षा का क्रेज़ भी बढ़ा, क्योंकि खाड़ी देशों में सस्ते तकनीकी श्रम की मांग बढ़ी है. पहली स्थिति में जहां आंतकवाद की कथित परिभाषा के चलते दाढ़ी–टोपी वालों को आसानी से आतंकी बता कर शिकार बनाया जा रहा है, तो दूसरी ओर हाई–टेक आतंकी होने के नाम पर आधुनिक रुझानों वाले युवकों को टारगेट किया जा रहा है. तीसरे, आजमगढ़ उसी यूपी में है, जहां पर काशी, मथुरा और अयोध्या जैसे स्थान हैं, जिनके जरिए संघ परिवार अपनी सांप्रदायिक राजनीति को खाद–पानी देता है. संघ का फासिस्ट प्रयोग कहता है कि अपने ही घर के आस–पास के कुछ तबक़ों और इलाकों को ही आंतरिक शत्रु घोषित कर दो. इस खांचे में भी आजमगढ़ बिल्कुल ठीक बैठता है. मसलन यूपी और इसके बाहर आजमगढ़ से भी ज़्यादा मुस्लिम बहुल इलाके हैं. जैसे पश्चिमी यूपी में रामपुर, सहारनपुर या मेरठ, बिहार में किशनगंज या भागलपुर, केरल, बंगाल और आंध्र–प्रदेश के दर्जनों ज़िले भी संघ परिवार के एजेंडे पर हैं. लेकिन हिंदुत्ववादी रणनीति के तहत आतंकवाद के गढ़ के तौर पर इन इलाक़ों की छवि पर चोट करना उतना आसान नहीं था, जितना कि आजमगढ़ में था. क्योंकि इनके पूरे मंदिर आंदोलन का इन क्षेत्रों में प्रभाव नगण्य रहा. जबकि अयोध्या से सटे हुए पूरे पूर्वांचल में इसकी तपिश सबसे ज़्यादा थी. हालांकि आजमगढ़ उस बुरे दौर में भी सांप्रदायिक सौहार्द का केंद्र बना रहा और यहां दंगे नहीं हुए.

आज हिंदुत्ववादियों ने अयोध्या से बढ़ी हुई चेतना पर आधुनिक अयोध्या के रूप में आजमगढ़ को खड़ा किया है. अयोध्या में उनका प्रत्यक्ष आक्रमण सदियों पहले हिंदुस्तान आए मुस्लिम शासक बाबर को सामने रख कर मुसलमानों पर था, तो आज उन्होंने इसी मिट्टी से पैदा हुए मुसलमानों को बाबर का स्थानापन्न बना दिया है. इसकी तस्दीक़ इससे भी होती है कि जब आजमगढ़ को आतंकवाद के गढ़ के तौर पर बदनाम किया जाने लगा, तब उसकी आड़ में संघ परिवार और भाजपा, जो अब तक के अपने इतिहास में यहां सांकेतिक चुनाव ही लड़ती थी, ने 'इस्लामी आतंकवाद मुर्दाबाद', 'आजमगढ़ नहीं आर्यगढ़ है' के साथ ही 'जय श्री राम', 'रामजन्मभूमि की जय', 'राम लला हम आएंगे, मंदिर वहीं बनाएंगे' के नारे खूब लगाए. आज, जब देश के दूसरे हिस्सों में संघ परिवार राम मंदिर के मुद्दे पर इस तरह के नारे लगाने की हैसियत और विश्वसनीयता खो चुका है, वहीं पूर्वांचल में आजमगढ़ के बहाने फिर 92 के जिन्न की वापसी कराई जा रही है. मसलन अगर आजमगढ़ में ही देखें, तो पूरा इलाका एक दौर में मंडल के बाद उभरे अस्मितावादी संस्कृतिकरण की राजनीति के बहाव में था. संघ परिवार की सांप्रदायिक राजनीति को यहां के पिछड़े–दलित तबक़े ने 'मिले मुलायम कांशीराम, हवा में उड़ गए जय श्री राम' के नारे के साथ ख़ारिज़ कर दिया. आज हालांकि हम साफ देख सकते हैं कि आतंकवाद के बहाने यहीं पर इन्हीं जातियों का एक बड़ा तबक़ा वे सारे नारे लगा रहा है, जिसे उसने 92 में ख़ारिज़ कर दिया था.

दरअसल आज आजमगढ़ में संघ परिवार की राजनीति के लिए उसके इतिहास में सबसे बेहतर मौक़ा है. '90 में ही यह गिरोह कांग्रेस, बसपा, सपा, कम्युनिस्टों और जनता दल जैसी पार्टियों पर उनके मुस्लिमपरस्त होने की लानत देकर हिंदुओं को अपने साथ खड़ा करने की कोशिश कर रहा था. इसमें उनको इसलिए सफलता नहीं मिल पा रही थी, क्योंकि पिछड़ी–दलित जातियों का संस्कृतिकरण अस्मितावादी चेहरे के साथ ही चल रहा था, जिसमें उसकी राजनैतिक ज़रूरत अल्पसंख्यकों को अपने साथ जोड़ कर रखना था. आज मंडल से उपजी इन जातियों की राजनीति का सांस्कृतिक तौर पर पूरी तरह से ब्राह्मणीकरण हो चुका है. इसके चलते एक ओर जहां वे संघ परिवार से अपने फर्क को ख़त्म करके उसी की कतार में खड़े दिखने लगे, वहीं मुस्लिमों में भी यह विचार मज़बूत होने लगा कि इन पार्टियों और भाजपा में कोई अंतर नहीं रह गया और अब हमें अपनी पहचान की राजनीति को ही विकसित करना चाहिए. इसी की परिणति बाटला हाउस के बाद सतह पर आए उलेमा काउंसिल में हुई है. ये ऐसी स्थिति है, जो संघ परिवार को आजमगढ़ में पनपने के लिए '90 के उस दौर से भी ज़्यादा स्पेस देती है. संघ परिवार, उलेमा काउंसिल की परछाईं को उसके शरीर से भी बड़ा स्थापित कर अपना मुस्लिम जनाधार बढ़ाने में लगा है. हालांकि उलेमा काउंसिल की राजनीति में शुद्ध मुस्लिम पहचान की राजनीति का रुझान फिलहाल नहीं दिखता.

जहां तक अंडरवर्ल्ड और आजमगढ़ के रिश्तों का सवाल है, तो '93 के मुंबई धमाकों में अबू सलेम का नाम पहली बार आया. पर आजमगढ़ की ऐसी छवि अधिक बनी. इसके लिए भगवा ब्रिगेड ने जी–तोड़ मेहनत की. गुलशन कुमार की धार्मिक छवि को हिंदुत्व के सांचे में ढाल कर इसे हिंदुओं पर आक्रमण के बतौर प्रचारित किया गया. यहां ग़ौर करने की बात है कि आजमगढ़ के जिन लोगों को इस हत्या का आरोपी बनाया गया, उसमें हिंदुओं की संख्या अधिक थी और जिस 'मेड इन बम्हौर' लिखे कट्टे की जन्मस्थली आजमगढ़ में बम्हौर गांव है, वहां पर इस व्यवसाय को भी पुलिस की मिलीभगत से हिंदू ही करते हैं. अबू सलेम के अब तक पकड़े गए गुर्गों में बहुतायत हिंदू हैं. ऐसे में अगर आजमगढ़ को समझना है, तो इसे हिंदू–मुस्लिम के खांचे में देखना निहायत ही नादानी का काम होगा.

(शेष पृष्ठ 2 पर)

दिल्ली के बाबू

दिलीप चेरियन

पुलिस और चोर

आईपीएस संगठन की मांग के बाद छठे वेतन आयोग के तहत आईएएस और आईपीएस काडरों की आय में आई समानता पर एक बार फिर से ख़तरे के बादल मंडराते दिख रहे हैं. कम से कम आईपीएस अधिकारियों को तो यही डर सता रहा है. खाकी वर्दीधारी स्पष्ट रूप से मानते हैं कि सरकार के पास मुख्य सचिव स्तर के केंद्रीय अधिकारियों को 85,000 रुपए प्रतिमाह वाले प्रस्ताव तैयार रखे हुए हैं. यदि यह प्रस्ताव कैबिनेट से मंजूर हो जाता है, तो हाल ही में आईएएस और आईपीएस कैडरों को मिली वेतन समानता अपने आप ख़त्म हो जाएगी और आईएएस अधिकारी एक बार फिर से आईपीएस अधिकारियों से ज़्यादा तनख़्वाह लेने लगेंगे.

सूत्रों की मानें, तो घबराए हुए आईपीएस अधिकारी सरकार के इस क़दम से खुश नहीं हैं और उन्होंने उच्च अधिकारियों से इस मामले में सही कार्रवाई करने की गुहार लगाई है. अभी मुख्य सचिवों और सचिवों को राज्य पुलिस अधिकारियों और निदेशकों के बराबर अस्सी हज़ार रुपए प्रतिमाह मिलते हैं. हालांकि कर्मचारी और ट्रेनिंग विभाग के अधिकारी ऐसी किसी भी कोशिश से इंकार करते हैं, जिसके चलते आईएएस और आईपीएस अधिकारियों के बीच कोई भी भेदभाव हो. वहीं पुलिसवाले इस बात से इत्तफाक नहीं रखते. बहरहाल, आईएएस और आईपीएस अधिकारियों के बीच चल रही इस रस्साकसी में किसकी जीत होती है, जानने के लिए पढ़ते रहिए दिल्ली के बाबू...

हर पद पर आईएएस

सरकार की पेशेवर और कुशल लोगों को निजी क्षेत्र से नियामक विभाग में लाने के लिए की गई तमाम कोशिशें फीकी पड़ती हुई दिख रही हैं. छठा वेतन आयोग आने के बाद उच्च अधिकारियों की बढ़ी हुई आय से लोगों में उम्मीद की किरण तो ज़रूर जागी थी, परंतु अगर स्पष्ट रूप से देखा जाए, तो अभी भी कुछ ही लोग इस बात को लेकर गंभीर हैं. और इसी कारण से आज भी जो पद योग्य लोगों के पास होने चाहिए, उन पर कोई और विराजमान है.

शुरू में सरकार के उच्च पदों के लिए सबसे आवेदन मांगे गए, जो निजी या सार्वजनिक क्षेत्रों में ऊंचे पदों पर रह चुके हैं, लेकिन सारे के सारे पद आखिरकार आईएएस बाबू को ही दिए गए. रिटायर्ड धनेंद्र कुमार का चेयरमैन के पद पर आसीन होना इसी बात को दर्शाता है. इससे पहले ब्यूरोक्रेट पीएच कुरियन को कोंपटोलर जनरल आफ पेटेंट नियुक्त किया गया था. जाने-माने आरटीआई अरविंद केजरीवाल अब उच्च पदों पर होने वाली नियुक्ति का लेखा-जोखा देखते हैं.

फिलहाल टीआरएआई चीफ के पद पर नियुक्ति की प्रक्रिया अभी जारी है. क्या इस पर भी कोई बाबू ही आएंगे? जॉनी जोसेफ के एक इंटरव्यू से तो साफ है कि इस पद पर भी किसी आईएएस को ही बैठाने की तैयारी है.

साउथ ब्लॉक

अंजुम ए ज़ैदी

ज्वाइंट सेक्रेटरी के लिए नियमों में फेरबदल

जेएस पद पर आसीन होने के लिए नियमों में फेरबदल किया गया है. सरकार उप-सचिव/निदेशक पद के लिए न्यूनतम अनुभव सीमा को दो वर्ष से ज्यादा करने पर गंभीरता से विचार-विमर्श कर रही है. जेएस पद के लिए यह एक अहम फैसला होगा. यह कदम अधिकारियों को केंद्रीय प्रतिनियुक्ति पर उप-सचिव/निदेशक स्तर के पदों की तरफ लोगों का रुझान बढ़ाने के लिए उठाया गया है.

ट्राय के नए चेयरमैन के लिए जॉनी का नाम

जॉनी जोसेफ का नाम ट्राय के चेयरमैन के पद के लिए प्रस्तावित किया गया है. जॉनी जोसेफ महाराष्ट्र के 1972 बैच के आईएएस अधिकारी हैं. वह इसी वर्ष 31 मई को रिटायर हो रहे हैं. इसके बाद वह अपनी सेवाएं निर्वाचन आयोग को देने के लिए भी इच्छुक हैं. इससे पहले वह 29 फरवरी 2009 से मई 2007 तक मुंबई नगरपालिका में कमिश्नर के पद पर रह चुके हैं. इसके अलावा वह महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री के मुख्य सचिव के पद पर भी कार्यरत रहे हैं. उनकी पत्नी रीना जोसफ अपनी सेवाएं समाज को कई प्रकार से देती आई हैं.

एमपीईडीए की अध्यक्ष होंगी लीना नायर

केरल के कोच्चि क्षेत्र में मरीन प्रोडक्ट्स एक्सपर्ट डेवलपमेंट अथॉरिटी में चैयरमैन पद पर नियुक्ति के लिए लीना नायर का नाम प्रस्तावित किया गया है. यह पद वाणिज्य मंत्रालय के ज्वाइंट सेक्रेटरी के स्तर का है. लीना नायर तमिलनाडु के 1982 बैच की आइएएस अधिकारी हैं. जल्द ही उन्हें इस पद से सम्मानित किया जाएगा.

दूरदर्शन में अरुणा

अरुणा शर्मा को दूरदर्शन का नया डायरेक्टर जनरल बनाया गया है. अरुणा शर्मा मध्य प्रदेश से 1982 बैच की आईएएस अधिकारी हैं. तमाम विरोधों के बावजूद उन्हें इस पद से सम्मानित किया गया है. उनकी उम्मीदवारी के बाद कैट में उन पर सवाल उठाया गया, पर बाद में उसे रद्द कर दिया गया था. अरुणा के बेहतरीन संपर्क सूत्रों की वजह से इस पद पर आसीन हुई हैं.

जी अशोक दास

खदान मंत्रालय के निदेशक होंगे

खदान मंत्रालय में निदेशक पद के लिए आंध्रप्रदेश के 1991 बैच के आईएएस अधिकार जी अशोक दास का नाम प्रस्तावित किया गया है. इससे पहले इस पद पर इंटीग्रेटेड डेवलपमेंट असेसमेंट सिस्टम में 1985 बैच के अधिकारी नवल किशोर रहे हैं. दो फरवरी को उनका कार्यकाल पूरा होने के बाद से यह स्थान रिक्त हो गया है.

ये आजमगढ़ है, आतंकगढ़ नहीं

(प्रथम पृष्ठ का शेष)

है, तो इसे हिंदू-मुस्लिम के खांचे में देखना निहायत ही नादानी का काम होगा.

आज जब आतंकगढ़ के रूप में आजमगढ़ को स्थापित करते हुए कथित इंडियन मुजाहिद्दीनों के ज़िले से इसे नवाजा जा रहा है, ऐसे में एक घटना की तस्दीक़ अवश्य होनी चाहिए. 7 सितंबर 2008 को आजमगढ़ में योगी आदित्यनाथ जबरिया मुस्लिम तकिया में घुसे और वहां मौजूद लोगों को मुस्लिम विरोधी गालियां दी और मारपीट की. इसके बाद जो दंगा भड़का, उसमें भगवा ब्रिगेड की गोली से मतीउल्ला की मौत हो गई. इस बात को प्रशासन ने भी स्वीकारा कि योगी के काफिले का वो रूट नहीं था. इस पूरे प्रायोजित दंगे में गुंडों की संलिप्तता किसी से छिपी नहीं है, पर उल्टे योगी ने इसे खुद पर आतंकी हमला बताया. सबसे महत्वपूर्ण पहलू इसमें यह था कि इस घटना पर इंडियन मुजाहिद्दीन ने ईमेल जारी कर बधाई भी दी थी. ऐसे में मेल भेजने वाले और योगी के रिश्तों की जांच आवश्यक हो जाती है. वैसे योगी के लोग लंबे समय से आतंकी गतिविधियों में लिप्त पकड़े गए हैं. अभी पिछले साल ही पूर्व भाजपा सांसद और कथित संत राम विलास वेदांती, जो एक टीवी चैनल के स्टिंग आपरेशन में काले धन को सफेद करने में पकड़े जा चुके हैं, को सिमी की तरफ से धमकी मिली थी. सिमी के खिलाफ हिंदू युवा वाहिनी समेत पूरे भगवा कुनबे ने धरना-प्रदर्शन शुरू कर दिया था. जब पुलिस ने छानबीन की, तो इस पूरे प्रकरण के मास्टर माइंड स्थानीय हिंदू युवा वाहिनी के नेता ही निकले, जो खुद ही धरना-प्रदर्शन की अगुआई कर रहे थे. इस खुलासे के बाद वेदांती ने एफआईआर वापस ले लिया.

'यूपी भी गुजरात बनेगा, आजमगढ़ इतिहास रचेगा' के नारे लगाने वालों ने आजमगढ़ को आतंकगढ़ के रूप में स्थापित करने की कवायद तकरीबन 2000 में ही शुरू कर दी थी. 2000 में गणतंत्र दिवस पर शिब्ली नेशनल कालेज में वंदेमातरम को लेकर हुआ दंगा असफल होने के बाद इन संगठनों को काफी धक्का लगा, पर इस हंगामे से पूर्वांचल में सांप्रदायिकता का धुंआ दुबारा सुलगाने में इन संगठनों को काफी मदद मिली. बाद में योगी ने अपनी विस्तारवादी सोच के तहत बेरोज़गार, समाज से कटे नौजवान को मुख्यधारा में लाने के नाम पर अपनी फासिस्ट हिंदू युवा वाहिनी जैसे अर्द्धसैनिक बलों जैसे सामंती जनसंगठनों में भर्ती किया. शिब्ली नेशनल कॉलेज के छात्र नेता अजीत राय की व्यक्तिगत कारणों से की गई हत्या के बाद 13 सितंबर 2004 को पहली बार योगी आदित्यनाथ ने आजमगढ़ को आतंकगढ़ कहते हुए हिंदू गतिविधियों का केंद्र बनाने की बात कही थी.

हाल में आई मालेगांव धमाकों की चार्जशीट बताती है कि गंगा के मैदानी भाग में जिस हिंदू राष्ट्र के लिए सशं संघर्ष की बात आई है, उसी ऑपरेशन का हिस्सा आजमगढ़ है. आज ये लोग उस शिब्ली नेशनल कॉलेज को इस्लामी आतंक की नर्सरी कह रहे हैं, जिसके संस्थापक शिब्ली नेमानी ने गुलामी के उस दौर में नेशनल शब्द से इसे अलंकृत किया था, जिस दौर में यह देशद्रोह समझा जाता था. गौरतलब है कि योगी जिस पीठ के उत्तराधिकारी हैं, वहां लंबे समय से उग्र हिंदुत्व की पकड़ है. यहां माले गांव विस्फोटों में लिप्त अभिनव भारत की नेता हिमानी सावरकर का आना-जाना रहता है. दरअसल योगी का हिंदुत्व-वादी एजेंडा सावरकर और गोडसे की हिंदू महासभा का ही ब्लूप्रिंट है, जिसकी तस्दीक़ इस तथ्य से भी होती है कि गांधी जी की हत्या में इस्तेमाल हुई रिवॉल्वर इसी गोरक्षपीठ की थी. उस मामले में तत्कालीन महंथ दिग्विजय नाथ, जो हिंदू महासभा के संस्थापक सदस्य थे, उन्नीस महीने जेल में भी रहे. दुनिया को घुमक्ड़ी और भागो नहीं दुनिया को बदलो की सीख देने वालों को आज एक सरहद में कैद कर दिया गया है.

जहां-जहां आदमी, वहां-वहां आजमी कहने वालों के स्वर धीमे हो गए हैं. हो भी क्यों न धमाके चाहे जहां भी हों मास्टर माइंड आजमगढ़ का ही होगा. आतंक और दहशत के इस माहौल में पुलिस की सांप्रदायिक कल्पनाशीलता को बड़ी आसानी से स्वीकार्यता हासिल हो चुकी है.

बहरहाल, आज अपने शोक को संकल्प में तब्दील कर निर्णायक लड़ाई लड़ रहे आजमगढ़िए लोकतंत्र की वह नींव है जिनकी शहादत पर हमारा कथित सेकुलर राष्ट्र राज्य अपना रुपांतरण एक फासिस्ट हिंदू राष्ट्र के बतौर कर रहा है.

राजीव यादव

feedback.chauthiduniya@gmail.com

चौथी दुनिया
हिन्दी का पहला साप्ताहिक अखबार

आर एन आई रजि.न.45843/86

वर्ष 23 अंक 4

प्रधान संपादक
संतोष भारतीय

मैसर्स अंकुश पब्लिकेशंस प्राइवेट लिमिटेड के लिए मुद्रक व प्रकाशक रामपाल सिंह भदौरिया द्वारा जागरण प्रकाशन लिमिटेड डी 210-211 सेक्टर 63, नोएडा उत्तर प्रदेश से मुद्रित एवं के - 2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग, कनाट प्लेस, नई दिल्ली 110001 से प्रकाशित

संपादकीय कार्यालय
के - 2, गैनन
चौधरी बिल्डिंग
कनाट प्लेस
नई दिल्ली 110001

फोन न.
संपादकीय +91 011 47149999
विज्ञापन +91 011 47149916
प्रसार +91 011 47149905
फैक्स न. +91 011 47149906

समस्त कानूनी विवादों का क्षेत्राधिकार दिल्ली न्यायालयों के अधीन होगा.

दुनिया

चुनाव पर एक पाठक की नज़र

विनीत कुमार

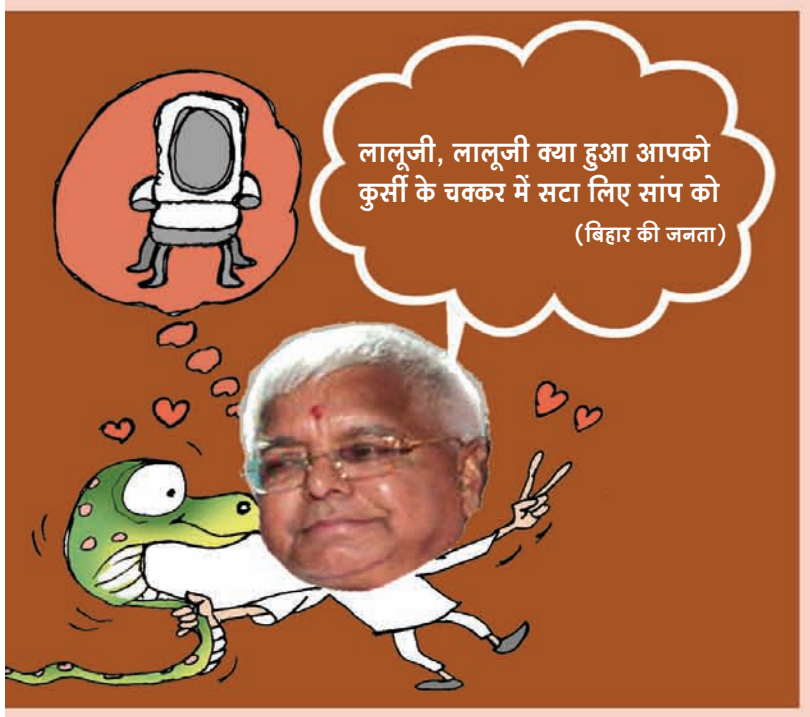

भाजपा के शासन में चावल पैंतीस रुपए बोरी होगा
जागो रे प्रजा दुखारी धान के खेत में चोरी होगा
(विदूषक)

जनता की आस्था का, खुलेआम व्यापार होगा
लालकृष्ण के राज में, श्रीराम का अवतार होगा
(विपक्षी पार्टियों का अनुमान)

अमर सिंह को है आनंद मिल गए उनको देवानंद
फिलिम पर्दे पर जब आएगा होम मिनिस्टरी मिल जाएगा
(सपा कार्यकर्ता हैं निश्चिंत)

बाहुबल का ज़ोर

चुनावी सभा में लालू प्रसाद के साथ शहाबुद्दीन की पत्नी

सुरेंद्र किशोर

राजनीति के चतुर खिलाड़ी लालू प्रसाद और रामविलास पासवान की चतुराई इस चुनाव में कसौटी पर है. बिहार में वे अपने हिसाब से अत्यंत होशियारी से तैयार की गई अपनी राजनीतिक व चुनावी व्यूह रचना के साथ चुनाव मैदान में हैं. इस बार उन्हें अपनी पिछली 29 सीटें बचाने के लिए काफी जद्दोज़हद करनी पड़ रही है, क्योंकि बेहतर क़ानून व्यवस्था और दिखाई पड़ने वाले विकास कार्यों के साथ चुनाव मैदान में जमे नीतीश कुमार से उनका कड़ा मुक़ाबला है. लालू प्रसाद को पहली बार बिहार में सत्ताविहीन होकर चुनाव लड़ना पड़ रहा है.

उम्मीदवारों के चयन के साथ-साथ साधन और मुद्दों को लेकर भी इन नेताद्वय ने राजग से अपनी बढ़त बनाने की कोशिश की है. समय बीतने के साथ इनकी कठिनाइयां बढ़ती महसूस हो रही हैं. लालू प्रसाद और रामविलास पासवान वैसे तो एक मज़बूत जातीय वोट बैंक के प्लेटफार्म पर खड़े होकर चुनावी युद्ध में हैं, पर एनडीए के नीतीश कुमार और सुशील कुमार मोदी के इस प्रचार का भी असर होता दिख रहा है कि यदि केंद्र में लालू प्रसाद और रामविलास पासवान के सहयोग वाली सरकार अगली बार भी बन गई, तो वह सरकार नीतीश सरकार को नुक़सान पहुचाएगी और बिहार एक बार फिर जंगलराज और विकासहीनता के दौर में प्रवेश कर जाएगा. सर्वाधिक असर क़ानून व्यवस्था में आए सुधार का है, जो नीतीश कुमार के शासन में संभव हुआ है. नीतीश कुमार और सुशील कुमार मोदी की चुनावी सभाओं में जुट रही भीड़ से राजग नेतागण उत्साहित हैं. हालांकि भीड़ के मामले में लोजपा-राजद नेताओं को भी इस जागरूक प्रदेश में कोई शिक़ायत नहीं है.

उम्मीदवारों के मामले में कोई भी पक्ष दूध का धोया नहीं है. सभी प्रमुख दलों ने इस मामले में नैतिकता और शुचिता को एक बार फिर ताक पर रख दिया है. तर्क यह है कि जीतनेवाला उम्मीदवार ही चाहिए. भले उस पर भ्रष्टाचार, अपराध या दूसरे तरह के केस ही क्यों न चले हों. इतना ही नहीं, जिन बाहुबलियों के लिए क़ानूनी कारणों से खुद चुनाव लड़ना संभव नहीं हो पाया है, उनकी पत्नियों को प्रमुख राजनीतिक दलों ने टिकट थमा दिया है. किसी न किसी तरह से सीटें निकालनी जो हैं. पता नहीं, इस तरीक़े से सीटें निकलेंगी या नहीं! पर यह भी चुनावी रणनीति का ही अंग है. याद रहे कि राजद के निवर्तमान सांसद मोहम्मद शहाबुद्दीन की पत्नी हिना शहाब सिवान से चुनाव लड़ रही हैं. लोजपा के निवर्तमान सांसद सूरजभान सिंह की पत्नी वीणा सिंह नवादा से उम्मीदवार हैं. आनंद मोहन की पत्नी और पूर्व सांसद लवली आनंद कांग्रेस के टिकट पर शिवहर से उम्मीदवार हैं. आनंद मोहन शिवहर से दो बार सांसद रह चुके हैं. निचली अदालतों से सज़ा मिल जाने के कारण आनंद मोहन, शहाबुद्दीन और सूरजभान सिंह इस बार चुनाव नहीं लड़ पा रहे हैं.

उधर बाहुबली प्रभुनाथ सिंह जदयू के टिकट पर एक बार फिर महाराजगंज से उम्मीदवार हैं. चारा घोटाले के अभियुक्त डॉ जगदीश शर्मा जदयू के टिकट पर जहानाबाद से अपनी तक़दीर आजमा रहे हैं. जदयू के उपाध्यक्ष और वरिष्ठ नेता और पूर्व सांसद राम जीवन सिंह ने अपनी नम आंखों से हाल में जदयू छोड़ते समय कहा कि मैंने चारा घोटाले को उजागर किया. पर मुझे जदयू ने टिकट नहीं दिया और चारा घोटाले के अभियुक्त को टिकट दे दिया. रामजीवन सिंह 1990 में गठित लालू सरकार में पशुपालन मंत्री थे. बाहुबलियों और उनके परिजनों को टिकट देकर इन दलों ने एक तरह से अदालत की मंशा और निर्णयों की भी तौहीन की है. अदालतें क़सूरवार पाए जाने पर किसी बड़े बाहुबली को भी सिर्फ इसलिए नहीं बख्श रही है कि वे भारी मतों से चुनाव जीता करते हैं. विवादास्पद उम्मीदवारों को टिकट देने के इस कर्म को शरीफ नागरिक पसंद नहीं कर रहे हैं. वे उम्मीद कर रहे थे कि जब अदालतें कार्रवाई कर रही हैं, तो इसी लाइन पर राजनीतिक दल भी बाहुबलियों और उनके परिजनों को निरुत्साहित करते, तो राजनीति के अपराधीकरण और अपराध के राजनीतिककरण की समाप्ति की दिशा में वह ठोस क़दम होता. इस बात पर यहां अफ़सोस जाहिर किया जा रहा है कि कांग्रेस भी इसी पंक में इस बार डूब गई. कांग्रेस पहले अपराधियों को चोरी-छिपे मदद करती रही है. इस बार वह खुल कर सामने है. यह एक नया विकास है. कांग्रेस ने भी इस काम को आगे बढ़ाते हुए आनंद मोहन की पत्नी लवली आनंद और पप्पू यादव की पत्नी रंजीता रंजन को उम्मीदवार बनाने का निर्णय कर लिया है.

बिहार विधानसभा का चुनाव पिछली बार सन 2005 के नवंबर में हुआ था. वह चुनाव चूंकि राष्ट्रपति शासन में हुआ था, इसलिए चुनावी धांधली काफी कम हुई. ऊपर से चुनाव आयोग के विशेष पर्यवेक्षक केजे राव ने निष्पक्ष चुनाव के लिए महत्वपूर्ण क़दम उठाए. नतीजतन सिवान और पूर्णिया में भी क्रमश: शहाबुद्दीन और पप्पू यादव समर्थित अधिकतर उम्मीदवार हार गए.

इस बार भी उम्मीद की जा रही है कि बिहार में चुनावी धांधली नहीं हो पाएगी या फिर कम होगी. यदि ऐसा सचमुच हुआ, तो बिहार के बाहुबलियों के लिए जनता के बीच असली समर्थन कितना है, इसका भी पता चल जाएगा. फिर इस बात का भी पता चलेगा कि साथ मिल कर चुनाव लड़ने के कारण रामविलास पासवान और लालू प्रसाद को कितना राजनीतिक व चुनावी लाभ मिलता है. उनकी यह चुनावी रणनीति काम करती है या नहीं. रामविलास पासवान ने यह भी कहा है कि अब हमलोग बिहार विधानसभा का चुनाव भी मिल कर ही लड़ेंगे. राजग विरोधी मतों के बंटवारे को रोकने के लिए रामविलास पासवान और लालू प्रसाद मिल कर चुनाव लड़ रहे हैं.

पप्पू यादव की सांसद पत्नी रंजीता रंजन

पहले यह भी कहा जा रहा था कि एक खास रणनीति के तहत ही लालू प्रसाद और रामविलास पासवान ने बिहार में कांग्रेस से झगड़े का नाटक किया ताकि सवर्ण वोट बंट जाए और राजग को उससे नुक़सान हो. ऐसा सन 2000 के विधानसभा चुनाव में हुआ भी था.

पता नहीं यह काम जानबूझ कर किया गया या किसी और मजबूरी में. पर कांग्रेस के राजद-लोजपा से अलग होकर लड़ने के कारण दोनों गठबंधनों को नुक़सान होता प्रतीत होता है. कांग्रेस दुधारी तलवार का काम कर रही है. आम तौर से कांग्रेस की ओर से सवर्ण उम्मीदवार ही दिए जाते थे. पर इस बार कई क्षेत्रों में पिछड़े समुदाय के कई दबंग और प्रभावशाली उम्मीदवार कांग्रेस की ओर से मैदान में हैं. ऐसे उम्मीदवारों में लालू प्रसाद के प्रभावशाली साले साधू यादव और निवर्तमान राजद सांसद पप्पू यादव की पत्नी व लोजपा की निवर्तमान सांसद रंजीता रंजन प्रमुख हैं. ये उम्मीदवार जीतने लायक उम्मीदवार माने जा रहे हैं. यदि नहीं भी जीत सके, तो ये उम्मीदवार राजद-लोजपा उम्मीदवारों को नुक़सान तो पहुंचा ही सकते हैं. इस बार विभिन्न दलों ने उम्मीदवार उतारने में देर भी इसलिए की, क्योंकि एक तो उन्हें दलबदलुओं का इंतज़ार रहा या फिर वे प्रतिद्वंद्वी उम्मीदवारों को देख लेना चाहते थे. इस बार दल-बदल इतने बड़े पैमाने पर हुआ कि यह लगा कि राजनीति का मतलब अब सिर्फ विधायिका की सीटें ही हैं. इसके अलावा और कुछ भी नहीं. एमपी-एमएलए फंड के कमीशन ने राजनीति को पूरी तरह व्यावसायिक प्रकल्प बना कर छोड़ दिया है.

वैसे तो हर चुनाव महत्वपूर्ण होता है, पर कई मामलों में यह चुनाव काफी महत्वपूर्ण माना जा रहा है. यह चुनाव लालू प्रसाद के राजनीतिक और क़ानूनी भविष्य का फ़ैसला भी करेगा. उन पर और उनकी पत्नी राबड़ी देवी पर चारा घोटाले से संबंधित गंभीर केस चल ही रहे हैं. वे केस अंतिम मुकाम पर हैं. भाजपा नेता व उपमुख्यमंत्री सुशील कुमार मोदी ने आरोप लगाया है कि लालू प्रसाद ने केंद्र में मंत्री रहते हुए अपने केस में राहत पाने के लिए अपनी राजनीतिक ताक़त का भरपूर इस्तेमाल किया. यानी भाजपा को यह लगता है कि यदि दुबारा लालू प्रसाद ताक़तवर हो गए, तो वे इस दिशा में और भी काम करेंगे. साथ ही वह नीतीश सरकार को अस्थिर करने की भी कोशिश करेंगे. लालू प्रसाद ने पिछले साल यह एलान भी कर दिया था कि 28 अक्तूबर 2008 तक नीतीश सरकार गिर जाएगी. इस चुनाव प्रचार के दौरान भी वे कह रहे हैं कि केंद्र में जब एक बार फिर यूपीए की सरकार बन जाएगी, तो उसके बाद छह महीने में नीतीश सरकार गिर जाएगी. संभवत: वह ऐसा इसलिए भी कह रहे हैं ताकि नीतीश सरकार के कट्टर विरोधी इस चुनाव में पूरा ज़ोर लगा दें.

यानी लोकसभा के इस चुनाव के नतीजे का संबंध बिहार मंत्रिमंडल के भविष्य से भी जोड़ दिया गया है. इसलिए भी एनडीए इस चुनाव को दूरगामी परिणाम वाला चुनाव मान कर चल रहा है. वैसे भी यदि लालू प्रसाद को बिहार से कम सीटें मिलीं या फिर यूपीए की सरकार केंद्र में किसी कारणवश दुबारा नहीं बनी, तो लालू प्रसाद पहली बार सत्ता से पूरी तरह बाहर होंगे. यानी तब न बिहार में सत्ता रहेगी और न केंद्र में ही रहेगी. सत्ता के बाहर लालू प्रसाद कैसे दिखते हैं, यह देखना भी देश और प्रदेश की राजनीति के लिए दिलचस्प होगा. लालू प्रसाद एक नए प्रशासनिक माहौल में भी इस बार चुनाव लड़ रहे हैं. पहली बार गत तीन साल से बिहार की सत्ता पर लालू प्रसाद का प्रत्यक्ष या परोक्ष वर्चस्व नहीं है. पिछले बिहार विधानसभा चुनाव के समय कम से कम राष्ट्रपति शासन तो था. तब सरदार बूटा सिंह बिहार के राज्यपाल थे. केंद्र में काफी प्रभाव रहने के कारण लालू प्रसाद बूटा सिंह के जरिए राज्य शासन पर असर रखते थे. इस बार वह सब अनुपस्थित है. इसका चुनाव पर कैसा असर पड़ता है, यह देखना भी दिलचस्प होगा. यानी सत्ता के बिना लालू प्रसाद चुनाव मैदान में!

रामविलास पासवान और लालू प्रसाद ने इस चुनाव में अपनी पिछली चुनावी उपलब्धियों को दुहराने के लिए एक और दांव खेला है. इन दोनों नेताओं के समर्थक भीतर-भीतर यह प्रचार कर रहे हैं कि हमारे नेता इस चुनाव के बाद प्रधानमंत्री बनेंगे. दरअसल इसीलिए इन लोगों ने कांग्रेस से खुद को अलग करके इस चुनाव में अपने उम्मीदवार खड़े किए हैं.

इस प्रचार से यह असर होता है कि उनके वोट बैंक का समुदाय अपनी बिरादरी के नेता में प्रधानमंत्री बनने की संभावना देख कर उसके पक्ष में उत्साहित होकर वोट देता है. वैसे लालू प्रसाद ने सर्वाजनिक रूप से पहले ही यह कह रखा है कि यदि दलितों में से ही किसी को प्रधानमंत्री बनना है, तो रामविलास पासवान इस पद के लिए सबसे योग्य उम्मीदवार हैं. अपने बारे में खुद लालू प्रसाद यह बात कई बार कह चुके हैं कि मैं एक न एक दिन प्रधानमंत्री तो ज़रूर बनूंगा, पर अभी नहीं. मैं किसी जल्दबाजी में नहीं हूं.

हालांकि सन 1996 के लोकसभा चुनाव में हाजीपुर में लालू प्रसाद ने रामविलास पासवान को तभी मदद की, जब श्री पासवान ने आधे मन से ही सही, पर यह घोषणा की कि वह चुन कर जाने के बाद लालू प्रसाद को ही प्रधानमंत्री बनवाएंगे.

उधर नीतीश कुमार विकास व बेहतर क़ानून व्यवस्था के आधार वोट मांगते हुए मतदाताओं से अपील कर रहे हैं कि वे मेरी तीन साल की मेहनत की मज़दूरी दें. वह यह भी कहते हैं कि बात बनाने और काम करने वालों के बीच यह चुनाव है. लालू प्रसाद 'सांप्रदायिक आडवाणी' को प्रधानमंत्री नहीं बनने देने के लिए जनता से वोट मांग रहे हैं. रामविलास पासवान कहते हैं कि यह लड़ाई गरीब-गुरबा की है. सुशील कुमार मोदी कह रहे हैं कि मंदिर नहीं बल्कि विकास चुनावी मुद्दा है. मुख्यमंत्री नीतीश कुमार यह भी कह रहे हैं कि केंद्र सरकार की, बिहार के प्रति भेदभावपूर्ण नीति भी चुनावी मुद्दा है. इस प्रकार तरह-तरह के मुद्दों और साधनों के बल पर एक बीहड़ प्रदेश बिहार में चुनाव लड़े जा रहे हैं. देखना है कि इस बार ऊंट किस करवट बैठता है.

feedback.chauthiduniya@gmail.com

चुनाव सर्वेक्षण का धोखा

जनता को मूर्ख बना रहा है 20 सालों से मीडिया

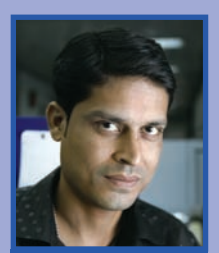

व्यालोक

प्रजातंत्र की एक खासियत है. इसमें सबके लिए जगह है. आप नेता हैं, आंदोलनकारी हैं, विचारक हैं, आर्टिस्ट हैं, सच के लिए लड़नेवाले समाजसेवी हैं या फिर झूठ बोल कर लोगों को झांसा देने में माहिर हैं, राजनीतिक दलों को चुनाव में हर तरह के लोगों की ज़रूरत पड़ती है. चुनाव के वक्त कुछ ऐसे लोगों को भी काम मिल जाता है, जो आंकड़े दिखा कर साइंटिफिक रिसर्च के नाम पर झूठ प्रचारित करने में बेमिसाल हैं.

डॉ प्रणय रॉय बड़े नाम हैं. बड़े पत्रकार हैं. उनके मोबाइल फोन में प्रधानमंत्री से

लेकर गृहमंत्री तक के नंबर फीड हैं. वह टीआरपी की इस दौड़ में भी तथाकथित तौर पर अपने आदर्शवाद का किला बचाए हुए हैं. वह कभी-कभार ही अपने चैनल पर दिखते हैं, लेकिन जब दिखते हैं, तो कमाल के दिखते हैं. यह कमाल आज का नहीं है, यह तो पूरे दो दशक पुराना कमाल है. यह कमाल उन्होंने 1989 से शुरू किया था. तब वह पूरे ताम-झाम और लाव-लश्कर के साथ चुनावपूर्व विश्लेषण करने निकले थे. तब का उनका विश्लेषण अर्धसत्य निकला. उन्होंने कांग्रेस की जीत का दावा किया था और कांग्रेस को सबसे अधिक सीटें भी मिली थीं, लेकिन सरकार राष्ट्रीय मोर्चा की बनी थी और कांग्रेस ने उसे बाहर से समर्थन दिया था. लेकिन मीडिया के प्रचार की ताक़त देखिए, उन्हें देश का सबसे बड़ा चुनाव विश्लेषक घोषित कर दिया. प्रणय रॉय आज तक उसी की कमाई खा रहे हैं. अब उनसे यह तो कोई पूछता नहीं कि उसके बाद उनका एक भी सर्वेक्षण सही क्यों नहीं निकला. या फिर कोई यह भी नहीं पूछता कि भइए, तुमने तो जो भी भविष्यवाणी की, वह तो सारा ग़लत हो गया, इसके बावजूद आप अब भी लगातार नई-नई गणनाएं क्यों करते जा रहे हो? साथ ही पूरी बेशर्मी से आप अब भी सीना ठोंक कर क्यों हरेक चुनाव के समय नई सरकार बनाने की भविष्यवाणी करने में लग जाते हैं.

बात केवल प्रणय रॉय की ही नहीं है. तमाम ख़बरिया चैनल और अब तो अख़बार वाले भी इस अंधी दौड़ में शामिल हो चुके हैं. चुनाव होने का समय आते ही मानो इनके रगों में बिजली दौड़ जाती है. हरेक चैनल पर नई सरकार के बनने और बिगड़ने का गणित लगाया जाने लगता है. भले ही वह ग़लत ही क्यों न हो. भारत की जनता की याददाश्त वाकई कमज़ोर है, तभी तो पिछले 20 वर्षों से टीवी चैनलों के चुनाव पोल के कार्यक्रम उन्हें गुमराह करते आ रहे हैं. हर बार चुनाव के समय टीवी चैनलों पर कार्यक्रमों की झड़ी-सी लग जाती है. ऐसे में कोई पार्टी जीते न जीते, तथाकथित चुनाव विशेषज्ञ तो बाज़ी मार ही ले जाते हैं.

इस सूची में सबसे पहला नाम एनडीटीवी के चेयरमैन प्रणय राय का आता है, जिन्होंने जनता को मूर्ख बनाने की इस प्रथा की शुरुआत की. 1989 में उन्होंने तथाकथित तौर पर 70,000 लोगों का सर्वे किया था. अब इस बात पर शुब्हा कैसे न हो कि जब आज के आधुनिक युग में भी भाई लोग महज कुछ हज़ार लोगों का सर्वे कर कोई भी फ़ैसला कर देते हैं, तो उस ज़माने में प्रणय दा ने कैसे 70,000 लोगों का सर्वे किया होगा, यह भी अचरज की ही बात है. हमारे नेताओं की तरह ही ये चुनाव सर्वेक्षण वाले भी निहायत गैरज़िम्मेदार और नाकारा हैं. जैसे हमारे नेताओं से कोई यह नहीं पूछता कि अचानक पांच सालों में उनकी संपत्ति कैसे तीन-चार गुनी हो जाती है, कैसे वे लखपति से करोड़पति बन जाते हैं (कम से कम सांसद या विधायक के तौर पर मिलनेवाले वेतन से तो उनकी इतनी आमदनी नहीं ही हो सकती), उसी तरह इन चुनावी पंडितों और धुरंधरों से कोई यह नहीं पूछता कि आख़िर एक के बाद एक ग़लत सर्वेक्षण देने के बाद भी ये निहायत बेशर्मी के साथ अगले चुनाव के नतीजे बताने क्यों सज-संवर कर अपने स्टूडियो में बैठ जाते हैं.

बात केवल प्रणय रॉय की ही नहीं है. तमाम ख़बरिया चैनल और अब तो अख़बार वाले भी इस अंधी दौड़ में शामिल हो चुके हैं. चुनाव होने का समय आते ही मानो इनके रगों में बिजली दौड़ जाती है. हरेक चैनल पर नई सरकार के बनने और बिगड़ने का गणित लगाया जाने लगता है. भले ही वह ग़लत ही क्यों न हो. भारत की जनता की याददाश्त वाकई कमज़ोर है,

प्रणय रॉय जैसे विश्लेषक सही (शायद ही कभी) या ग़लत हो सकते हैं, पर एक आम भारतीय मतदाता शायद ही 2004 के आम चुनाव के समय को भूल सकेगा (उससे पहले 2003 के विधानसभा चुनावों को भी), जब तमाम चैनलों ने इंडिया शाइनिंग की रौ में बहकर एनडीए के बहुमत की घोषणा कर दी थी. इस होड़ में एनडीटीवी सबसे आगे था, जिसने एसी-नेल्सन के साथ मिलकर सर्वे किया था. उसने एनडीए को 310 सीटें दी थीं, हालांकि बाद में एसी-नेल्सन ने इस सर्वे से खुद को अलग कर लिया. ज़रा एक नज़र इन आंकड़ों पर डाल लें. ये आंकड़े पिछले चुनाव (2004) के हैं और सभी खबरिया चैनलों ने एनडीए को विजेता घोषित कर दिया था.

चैनल	एनडीए	यूपीए	अन्य
एनडीटीवी	287-307	190-205	50-60
सहारा समय	263-278	171-181	90-102
स्टार न्यूज़	263-275	174-186	86-98
आज तक	189	106	
ज़ी न्यूज	249	176	118

वैसे, असल में नतीजे क्या रहे, यह आप खुद देख सकते हैं.

कुल सीटें	कांग्रेस और सहयोगी (यूपीए)	भाजपा और सहयोगी(एनडीए)
543	275	185

अब 2004 में आखिरी नतीजे क्या रहे, यह तो किसी से छिपा है नहीं. बावजूद इसके आप अभी कोई भी चैनल देखिए, भांति-भांति के लोग अलग-अलग तरह की कवायद में जुटे दिखाई देंगे. कोई दावा कर रहा है कि 'कौन बनेगा प्रधानमंत्री', कोई 'चुनाव-एक्सप्रेस' चला रहा है, कोई 'सत्ता का महासंग्राम' दिखा रहा है, तो कोई कुछ और दिखा रहा है. यह कहानी केवल आम चुनाव की नहीं है. विधानसभा चुनावों में भी खबरिया चैनल स्वयंभू भविष्यवक्ता बनते हैं और मुंह की खाते हैं. अभी नीतीश सरकार के बनने के पहले ही बिहार के चुनाव में भी यही कुछ हुआ. सभी चैनलों ने एक सुर में नीतीश की सरकार न बनने की भविष्यवाणी कर दी थी और लालू को जिता दिया था, जबकि परिणाम यह आए कि नीतीश की सरकार बनी और पूरी ठसक के साथ बनी. यही हाल महाराष्ट्र और आंध्रप्रदेश के चुनाव में भी हुआ. कर्नाटक में भी ऐसा ही कुछ हुआ. अब अगर यह कहा जाए कि ये खबरिया चैनल जो भी भविष्यवाणी करते हैं, होता उसके ठीक उलट है, तो कोई ग़लत बात नहीं होगी.

आख़िर चुनाव आयोग क्यों ऐसे सर्वेक्षणों के ख़िलाफ है? चुनाव आयोग ने बार-बार ऐसे सर्वेक्षणों पर रोक लगाने की अपनी मंशा जाहिर की है. इसकी मोटे तौर पर कुछ वजहें गिनाई जा सकती हैं. पहली तो यह कि मीडिया के जरिए तूल दिए गए इस तरह के सर्वेक्षण लोग देखते हैं और उनसे प्रभावित भी होते हैं. इसलिए इनसे मतदान के प्रभावित होने का ख़तरा रहता है. दूसरे, इनमें से अधिकतर प्रभाव अवैधानिक और अवैज्ञानिक होते हैं. यह खेल भी कुछ हद तक टीआरपी की तरह का ही होता है, जहां महज कुछ हज़ार घरों में मीटर लगाकर पूरे देश के दर्शकों का मिज़ाज भांपने का दावा किया जाता है. इसी तरह केवल कुछ हज़ार मतदाताओं से बात कर पूरे देश का मूड भांपने का दावा खबरिया चैनल करने लगते हैं.

साथ ही, यह भी कि उनका दावा सबसे पवित्र और सबसे बेहतर है. हालांकि, दावे सबके एक जैसे होते हैं और सभी खोखले ही साबित होते हैं. कुल मिला कर देखें, तो मसला केवल इतना ही है कि यह कुल मिला कर अंधों द्वारा हाथी की व्याख्या जैसा हो गया है. सात अंधे मिलकर हाथी के अलग-अलग अंग छूकर उसे रस्सी, खंभा और सूप बताते हैं. कुल मिलाकर हाथी क्या है, यह किसी को नहीं पता.

feedback.chauthiduniya@gmail.com

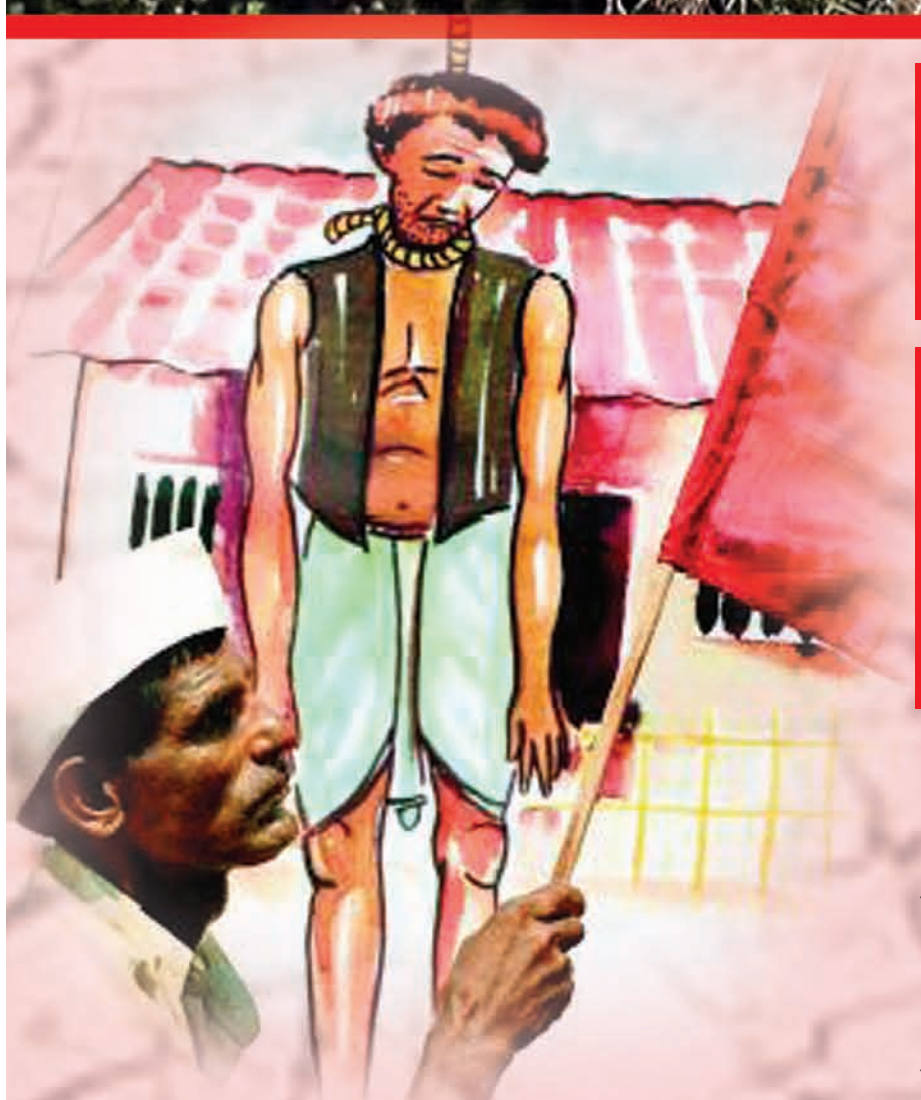

अन्नदाता की ख़ुदकुशी का इंतज़ाम

आंकड़े बताते हैं कि 1997 से 2008 तक भारत में क़रीब सवा लाख किसान ख़ुदकुशी कर चुके हैं. इनमें ऊपर बताए गए राज्यों के अलावा छत्तीसगढ़, गुजरात, पंजाब, उड़ीसा और केरल के किसान शामिल हैं. और यही वह समय भी है, जब देश में बीटी कॉटन यानी जेनेटिकली मॉडिफाइड बीजों का प्रचलन ज़ोर पकड़ रहा था. सन 2002 में, जहां देश में क़रीब 27 हज़ार हैक्टेयर क्षेत्र में बीटी कॉटन की खेती होती थी, यह दायरा 2006 में बढ़ कर 38 लाख हैक्टेयर पहुंच गया. इसी के साथ किसानों की परेशानियों का दौर भी बढ़ता चला गया।

रामनवमी के दिन जब भारतीय जनता पार्टी नई दिल्ली में राम, रोटी और किसानों को राहत की रेवड़ियां बांटने वाला चुनाव घोषणापत्र जारी कर रही थी, ठीक उसी समय भाजपाशासित मध्यप्रदेश की राजधानी भोपाल से महज सौ किमी दूर मौजूद पिपरिया के कुर्सीढाना गांव में एक किसान कीटनाशक ज़हर पीकर मौत को गले लगा रहा था. यह मध्यप्रदेश में बीते तीन दिनों में किसानों की ख़ुदकुशी का तीसरा मामला था. साथ ही भारतीय राजनीति के चुनावी वादों, घोषणाओं और ज़मीनी असलियत के बीच की कड़वी सच्चाई भी.

बात केवल भाजपा के घोषणापत्र की नहीं है, कांग्रेस ने भी अपने घोषणापत्र में किसानों को राहत देने की कई लोकलुभावन बातें कहीं हैं. मसलन, कम ब्याज दर पर कर्ज़, कर्ज़ भुगतान करने वाले किसानों के लिए ब्याज दरों पर छूट और फसल बीमा योजना. उधर भाजपा ने अपने घोषणापत्र में किसानों को कृषि कर्ज़ माफ़ करने, कृषि कर्ज़ महज 4 फीसदी ब्याज पर देने और साढ़े तीन करोड़ हेक्टेयर अतिरिक्त क्षेत्र को सिंचित करने का वादा किया है, वहीं सीपीएम ने ग्रामीण क्षेत्रों में ज़्यादा बिजली देने और न्यूनतम समर्थन मूल्य का दायरा बढ़ाने का वादा कर किसानों को ललचाने की कोशिश की है. लेकिन ये तमाम घोषणाएं दम तोड़ते किसानों और संकट में घिरती भारतीय कृषि को संजीवनी देने के बजाय उनकी मुसीबतें और ज़्यादा बढ़ाने वाली हैं.

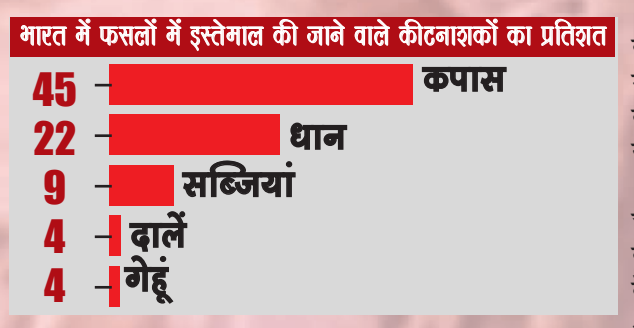

ज़रा ग़ौर करें, फिर से सत्ता में लौटने का मंसूबा पाल रही कांग्रेस हो या राम लहर पर सवार होकर सत्तानशीं होने का सपना संजोने वाली भाजपा या फिर नए सहयोगियों के दम पर दिल्ली में लाल परचम फहराने की जुगत में भिड़ी सीपीएम, इन तीनों में से किसी भी पार्टी के घोषणापत्र में देश के अन्नदाता किसानों को ख़ुदकुशी से बचाने के लिए कोई भी उपाय नहीं बताए गए हैं. जितनी भी घोषणाएं की गई हैं, वे महज इस खानापूरी के लिए हैं कि ख़ुदकुशी की यह दर थोड़ी कम की जाए. ध्यान देने वाली बात यह है कि महाराष्ट्र से कर्नाटक और आंध्रप्रदेश से मध्यप्रदेश तक जहां भी किसानों की ख़ुदकुशी एक गंभीर समस्या बनी हुई है, किसी भी सरकार ने इस पर ग़ौर नहीं किया और किसानों को ख़ुदकुशी की ओर धकेलने वाले कारणों को तलाशा जाए और उन पर रोक लगाई जाए ताकि किसान ख़ुदकुशी करने पर मजबूर न हों.

आंकड़े बताते हैं कि 1997 से 2008 तक भारत में क़रीब सवा लाख किसान ख़ुदकुशी कर चुके हैं. इनमें ऊपर बताए गए राज्यों के अलावा छत्तीसगढ़, गुजरात, पंजाब, उड़ीसा और केरल के किसान शामिल हैं. और यही वह समय भी है, जब देश में बीटी कॉटन यानी जेनेटिकली मॉडिफाइड बीजों का प्रचलन ज़ोर पकड़ रहा था. सन 2002 में, जहां देश में क़रीब 27 हज़ार हैक्टेयर क्षेत्र में बीटी कॉटन की खेती होती थी, यह दायरा 2006 में बढ़ कर 38 लाख हैक्टेयर पहुंच गया. इसी के साथ किसानों की परेशानियों का दौर भी बढ़ता चला गया। किसानों की ख़ुदकुशी के कारणों पर खुद सरकारी संस्थाओं के अलावा तमाम गैरसरकारी संगठनों के अध्ययनों व रिपोर्टों पर अगर विभिन्न राजनीतिक पार्टियों ने एक नज़र डाली होती, तो किसानों को कर्ज़ माफ़ी या कम ब्याज के कर्ज़ के चुनावी वादों के बजाय जीएम तकनीकी वाले बीजों पर अंकुश लगाने, देशी बीजों, तकनीक को प्रोत्साहित करने और कम लागत की, स्थानीय माहौल के अनुकूल फसल लगाने को प्रोत्साहित करने का ज़िक्र अपने चुनावी घोषणापत्र में करते. लेकिन इससे विदेशी बीज व दवा कंपनियों से होने वाले मुनाफे में कमी आ जाती.

शायद यही वजह है कि देश के हज़ारों किसानों की मौत को दरकिनार कर सत्ताशीन और विरोधी दल, जिन्होंने विदेशी कंपनियों से मिलने वाले मुनाफे पर अपनी आंखें गड़ाई हुई हैं और बीमारी को जड़ से उखाड़ फेंकने के बजाय रोगी के इलाज में हर दिन होने वाली कमाई में अंधे डॉक्टर की ही तरह किसान को मौत से बचाने के बजाय उसके परिवार को मुआवज़ा देकर मिलने वाली सहानुभूति और अंतत: वोट लेकर सत्ता की राजनीति खेलने में जुटे हुए हैं. सोचने वाली बात है कि महज बीटी काटन के असर से जब मध्यभारत के अन्नदाता किसानों की जान पर बन आई है, तो आनेवाले समय में बीटी भिंडी, बीटी बैंगन व अन्य जीएम सब्ज़ियों व फसलों के आने से अन्य राज्यों के किसानों का क्या हाल होगा?

इसकी ताज़ा मिसाल है, हाल ही में सुप्रीम कोर्ट का वह नोटिस, जो उसने विदेशी बीज कंपनी माइको को बिना ज़रूरी मंजूरी लिए झारखंड में बीटी बीज का प्रयोग करने पर कंपनी समेत केंद्र सरकार को भी जारी किया है.

हालांकि हमें इससे यह मुग़ालता नहीं पालना चाहिए कि किसानों को उनकी संभावित मौत से बचाने के लिए कोर्ट ही आख़िरी रास्ता सुझाएगी. देश के तमाम जनांदोलनों के सिलसिले में अलग-अलग समय में सुनाए गए फ़ैसलों में कोर्ट ने साफ कर दिया है कि वह क़ानून बनाने नहीं, उनका पालन नहीं होने की दशा में कार्रवाई करने वाली निकाय है. ऐसे में लोगों को सारा दबाव क़ानून बनानेवालों यानी अपने जनप्रतिनिधियों पर ही डालना चाहिए. लेकिन देश में किसान संगठनों की वर्तमान हालत और असली पीड़ित किसानों के बीच किसी तरह के संगठन या राजनीतिक दबाव की स्थिति बना पाने की नाकामी से ऐसा होना संभव नहीं दिखता. बात महाराष्ट्र के विदर्भ क्षेत्र के किसानों के लिए 11000 करोड़ के पैकेज की हो या फिर चुनाव से पहले देश भर के किसानो की कर्ज़ माफी के लिए 60 हजार करोड़ की सरकारी घोषणा की हो, देश के किसानों तक सरकार के ये पैकेज नहीं पहुंचे – किसानों की लगातार हो रही मौतें तो यही दर्शाती हैं. सरकारी मशीनरी की लापरवाही, जानलेवा उदासीनता, लालफीताशाही देश की ज़मीन को किसानों के ख़ून से लाल करती ही रहेगी. ऐसे में यही कहा जा सकता है कि देश के आगामी कर्णधारों ने अपने चुनावी घोषणापत्रों में अन्नदाता की ख़ुदकुशी का माकूल इंतज़ाम कर दिया है.

ए नम्र

feedback.chauthiduniya@gmail.com

राज्यों में बीटी कॉटन का क्षेत्र 2002–2006

राज्य/क्षेत्र	2002	2003	2004	2005	2006
महाराष्ट्र	12,424	21,854	161,475	508,692	1,840,000
गुजरात	9,137	41,684	125,925	149,258	470,000
मध्यप्रदेश	1,488	13,355	86,119	136,221	310,000
आंध्रप्रदेश	3,806	5,463	71,227	90,419	830,000
कर्नाटक	2,186	3,035	34,304	29,345	85,000
तमिलनाडु	374	7,689	11,995	17,017	45,000
उत्तरी क्षेत्र	.	.	.	83,503	215,000
अन्य	.	.	.	.	5,000
कुल	.	.	500,000	1,310,000	3,800,000

स्रोत: इंडियास्टैट व इएसएएए

राज्यों में तथा राष्ट्रीय स्तर पर ख़ुदकुशी करने वाले किसानों की संख्या–1997–06

राज्य	1997	1998	1999	2000	2001	2002	2003	2004	2005	2006
महाराष्ट्र	1,917	2,409	2,423	3,022	3,536	3,695	3,836	4,147	3,926	4,453
आंध्रप्रदेश	1,097	1,813	1,974	1,525	1,509	1,896	1,800	2,666	2,490	2,607
कर्नाटक	1,832	1,883	2,379	2,630	2,505	2,340	2,678	1,963	1,883	1,720
मध्यप्रदेश	2,390	2,278	2,654	2,660	2,824	2,578	2,511	3,033	2,660	1,375
गुजरात	565	653	500	661	594	570	581	523	615	487
अन्य राज्य	5,821	6,979	6,152	6,105	5,447	6,892	5,758	5,909	5,557	6,418
संपूर्ण भारत	13,622	16,015	16,082	16,603	16,415	17,971	17,164	18,241	17,131	17,060

स्रोत: एनसीआरबी, विभिन्न वर्ष

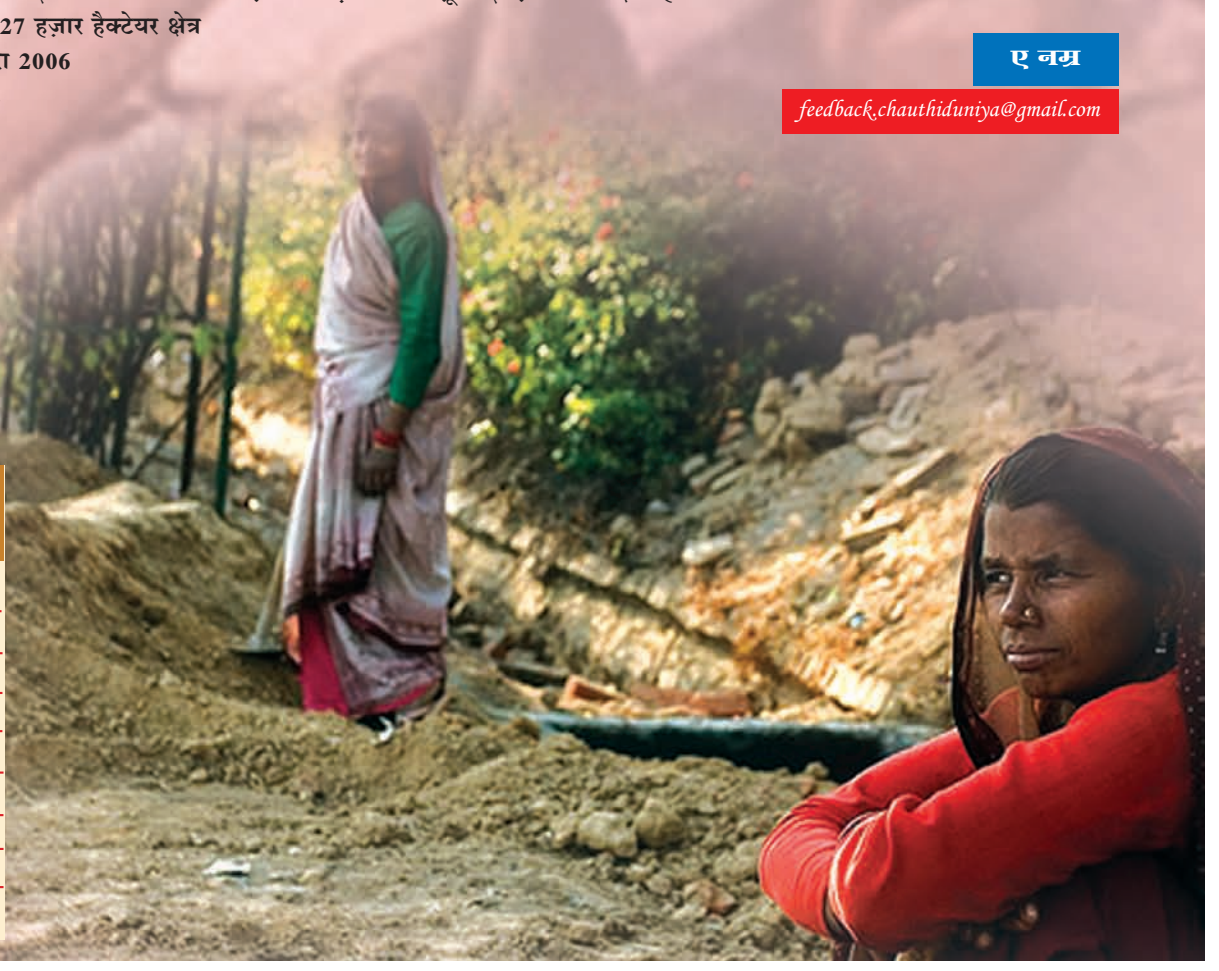

मध्यप्रदेश की चुनावी बाढ़ में डूब जाएगी कांग्रेस?

मध्यप्रदेश कांग्रेस में एक नए तूफान की आशंकाएं इन दिनों बलवती हैं. कांग्रेस लोकसभा चुनाव के बाद अपने कई राष्ट्रीय नेताओं के अस्तित्व को खो सकती है और नए नेतृत्व के रूप में फिर कांग्रेस के पुराने प्रभावशाली वर्ग द्वारा राज्य की सत्ता के लिए दावेदारी प्रस्तुत की जा सकती है. यह आशंकाएं पिछले दिनों कांग्रेस में टिकट वितरण के दौरान हुई भारी मारामारी के कारण प्रबल हुई है. मध्यप्रदेश में कांग्रेस के बदलाव का कार्यकर्ताओं पर क्या प्रभाव पड़ेगा, इसका आकलन तो दूर की बात है. लोकसभा चुनाव में संभावनाओं के विपरीत कांग्रेस अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष करने को बाध्य हो गई है. हाईकमान की कमज़ोरियां मध्यप्रदेश को कांग्रेस के लिए गुजरात और उत्तरप्रदेश जैसी स्थिति में लाकर खड़ा कर रही हैं. राजनीतिक विश्लेषक इन स्थितियों को कांग्रेस जैसे राष्ट्रीय दल के अस्तित्व के लिए गहरा संकट मान रहे हैं.

मध्यप्रदेश में लोकसभा के चुनावी टिकटों के वितरण को लेकर दिल्ली में हाईकमान की नाक के नीचे जिस बड़ी कूटनीतिक चाल को अंजाम दिया गया, इससे समूचा राज्य हतप्रभ है. कांग्रेस हाईकमान अज्ञात कारणों से राज्य में अपने अस्तित्व पर ही संकट खड़ा कर दे, यह बात समझ से परे नज़र आती है. टिकट वितरण के प्रारंभिक दौर में यह स्पष्ट नज़र आता था कि राज्य में विपक्ष की भूमिका पर चल रही कांग्रेस इन निर्वाचनों के दौरान अधिक से अधिक सीटें प्राप्त करने के लिए श्रेष्ठ और प्रभावशाली उम्मीदवारों के चयन पर ही ज़ोर देगी. टिकट वितरण का प्रारंभिक दौर इतनी मंत्रणाओं के दौर से गुज़रा कि यह कह पाना संभव नहीं था कि हाईकमान किन नियमों के तहत राज्य में दिए जाने वाले टिकटों का निर्धारण करने जा रहा है. प्रारंभिक दौर में ही धार, सतना, सीधी, होशंगाबाद, छिंदवाड़ा, गुना, झाबुआ सीटें कांग्रेस के लिए सुरक्षित मानी जा रहीं थीं. इन सीटों में अर्जुन सिंह, जमुना देवी, श्रीनिवास तिवारी, सुरेश पचौरी जैसे राजनैतिक दिग्गज अपने परिवारजनों की दावेदारी कर रहे थे. टिकट वितरण की विभिन्न बैठकों के बाद अचानक एक दिन यह निर्णय लिया गया कि धार संसदीय क्षेत्र से लोकसभा के प्रत्याशी के रूप में सिंधिया के विश्वस्त गजेंद्र सिंह राजुखेड़ी को, जमुना देवी की इच्छा के विपरीत टिकट दे दिया गया है.

संभवत: यह शुरुआत थी, जब धार आदिवासी सीट पर विधायक इमंग सिंघार की उम्मीदवारी को नकार कर राज्य में नेतृत्व के सफाए की शुरुआत की गई. कांग्रेस का एक वर्ग टिकट बंटने के पहले से ही एक रणनीति पर काम कर रहा था. कांग्रेस का यह वर्ग राज्य में एक समय के बाद अपने अधिकार को पूर्णत: सुरक्षित कर नेतृत्व के अन्य पक्षों को पूरी तरह समाप्त करने की कोशिश में था. टिकट वितरण में क्रमश: हो रही देरी कांग्रेसी कार्यकर्ताओं की बैचेनी को बढ़ा रही थी. धार संसदीय क्षेत्र से निर्णय होने के बाद जमुना देवी द्वारा इसका विरोध किया जाना तय था. वह हुआ भी, परंतु इस विरोध को कुछ नेताओं द्वारा हाईकमान का विरोध करार देकर दबा दिया गया. टिकट वितरण के अंतिम क्षणों तक यह संभावनाएं प्रबल थीं कि राज्य के पूर्व मुख्यमंत्री दिग्विजय सिंह किसी चुनावी क्षेत्र से प्रत्याशी अवश्य बनाए जाएंगे. दूसरी ओर स्वयं दिग्विजय सिंह ऐसी किसी भी कोशिश को नाकाम करने के प्रयास में लगे थे. यही कारण था कि राजगढ़ संसदीय क्षेत्र में लक्ष्मण सिंह के विरुद्ध कांग्रेस का प्रत्याशी घोषित होने में काफी समय लग गया. टिकट वितरण के अंतिम क्षणों में केवल दो संसदीय सीटों पर उलझन बाकी रह गईं. ये सीटें क्रमश: अर्जुन सिंह के प्रभाव वाली सतना संसदीय सीट और प्रदेशाध्यक्ष सुरेश पचौरी के प्रभाव वाली होशंगाबाद संसदीय सीट थी. कांग्रेस के सूत्रों का मानना है कि पचौरी पिछले दो वर्षों से इस संसदीय क्षेत्र में लगातार संपर्क कर रहे थे. वे स्वयं इस चुनाव के लिए पूरी तरह तैयार थे और अपनी समूची प्रतिष्ठा इन्होंने दांव पर लगा दी थी, ऐसी स्थिति में पचौरी के टिकट का अंतिम क्षणों तक लटका रहना प्रदेशाध्यक्ष की प्रतिष्ठा पर सबसे बड़ा आघात था. पचौरी आश्वस्त थे कि अंतिम क्षणों में ही सही, कांग्रेस उन्हें यह अवसर अवश्य प्रदान करेगी, परंतु हाईकमान के सामने अज्ञात रूप से तैयार कोई रिपोर्ट रखी गई, जिसमें पचौरी की पराजय की आशंका छिपी हुई थी. इस अज्ञात रिपोर्ट को पचौरी अपनी पूरी राजनीतिक अस्मिता दांव पर लगा कर भी झूठा प्रमाणित नहीं कर सके. दूसरी ओर केंद्रीय मंत्री अर्जुन सिंह सतना संसदीय क्षेत्र से अपनी पुत्री बीना सिंह को उम्मीदवार बनाना चाहते थे. सतना संसदीय क्षेत्र अर्जुन सिंह की पराजय के बाद से ही लगातार कांग्रेस से दूर रहा है. इस चुनाव में बीना सिंह ने अपने राजनीतिक प्रभाव को इतना विस्तारित कर लिया था कि वह एक प्रभावशाली उम्मीदवार के रूप में कांग्रेस के पक्ष में उम्मीदवारी घोषित कर सकें. अज्ञात रिपोर्ट ने इस संसदीय क्षेत्र में भी अर्जुन सिंह के दावों और प्रतिष्ठा को नकार कर बीना सिंह के टिकट को परिवर्तित करवा दिया. ऐसा नहीं है कि कांग्रेस ने इन क्षेत्रों में किसी श्रेष्ठतम उम्मीदवार का चयन करके अपनी विजय को सुनिश्चित किया हो. दोनों ही क्षेत्रों में खड़े किये गये उम्मीदवार अनुभवहीन और लोकसभा चुनावों के लिए बिल्कुल नए हैं. ऐसी स्थिति में सतना और होशंगाबाद सीटों पर प्रतिष्ठा का लगा हुआ दांव यदि समाप्त हुआ है, तो कांग्रेस के लिए ये दोनों सीटें भी हाथ से जाने के कगार पर हैं. कांग्रेस के उच्च सूत्रों से प्राप्त जानकारी के अनुसार मध्यप्रदेश के लोकसभा चुनावों में सर्वाधिक विवादास्पद निर्णय लेने वाला कांग्रेस हाईकमान राज्य के एक कांग्रेसी पक्ष के तथ्यों और निर्णयों को स्वीकार कर पाने की स्थिति में था. इन निर्वाचनों के दौरान कांग्रेस के सबसे प्रभावशाली गुट के रूप में पूर्व मुख्यमंत्री दिग्विजय सिंह और कमलनाथ की जोड़ी फिर सामने आई है. बैतूल क्षेत्र से एक हारे हुए सरपंच को कांग्रेस का प्रत्याशी बना लेना, सागर और मंदसौर जैसे क्षेत्रों में कांग्रेस के अपरिचित उम्मीदवारों का चयन करवा लेना, हाईकमान की अक्षमता का प्रमाण ही माना जा सकता है. संभवत: कांग्रेस हाईकमान मध्यप्रदेश को अपनी प्राथमिकता सूची में से निकाल चुका है. यह माना जा रहा है कि उत्तरप्रदेश और गुजरात की तरह मध्यप्रदेश भी अब कांग्रेस के लिए दूर की कौड़ी हो चुका है. ऐसा नहीं है कि कांग्रेसी कार्यकर्ताओं ने कांग्रेस हाईकमान को राज्य में दल की मज़बूत स्थिति से अवगत न कराया हो, परंतु कांग्रेस के हाईकमान के क़रीब बैठने वाला प्रभावशाली तबक़ा राज्य की राजनीति को व्यक्तिगत स्वार्थों की ओर मोड़ पाने में क़ामयाब रहा. कांग्रेसी राजनीति को समझने वाले विचारकों के अनुसार इस लोकसभा चुनाव में राज्य कांग्रेस में एक नए गुट ने पुन: जन्म लिया है, जो बिना किसी राजनीतिक विचारधारा के जोड़-तोड़, धनबल और बाहुबल के आधार पर कांग्रेसी सत्ता की वापसी की परिकल्पना को पूर्ण करने के लिए प्रयासरत है. होशंगाबाद निर्वाचन क्षेत्र में अपनी उम्मीदवारी की समाप्ति के साथ ही प्रदेशाध्यक्ष के सम्मुख सबसे अधिक अस्तित्व का संकट आ खड़ा हुआ है. एक ऐसा प्रदेशाध्यक्ष हारी हुई कांग्रेस की कमान संभाल रहा है, जो स्वयं हाईकमान के विश्वास में न रहकर अपनी सीट ही कूटनीतिक चालों के तहत लड़ने के पहले ही गंवा चुका है. इस चुनाव में कांग्रेस के विजयी उम्मीदवारों की संख्या 5 से अधिक नहीं हो पाएगी, ऐसा माना जा रहा है. यह तथ्य भाजपा के लिए उत्साहित करने वाला और कांग्रेस के लिए समाप्ति का संकेत देने वाला है. वर्तमान टिकट वितरण के बाद कांग्रेस केवल छिंदवाड़ा, गुना, खरगौन, झाबुआ और शहडोल सीटों पर अपनी विजय के प्रति आश्वस्त हो सकती है, जबकि सागर, मंदसौर, धार, सतना, सीधी राजगढ़ जैसी सीटें कांग्रेस ने तश्तरी में रख कर अन्य दलों को सौंपी हैं. राजनीति के जानकार इस बात पर विश्वास नहीं कर पा रहे कि एक-एक सीट के लिए भविष्य में होने वाले राजनीतिक संग्राम की संभावनाओं को नकार कर कांग्रेस मध्यप्रदेश में इतनी बड़ी भूल कैसे कर बैठी. सूत्रों से मिली जानकारी के अनुसार कांग्रेस में चल रही भ्रम की राजनीति और नेताओं के एक समूह द्वारा हाईकमान को भ्रमित करने की एक सोची-समझी रणनीति ने इन निष्कर्षों को जन्म दिया है. उल्लेखनीय है कि कांग्रेस राजनीति में इन दिनों इन्हीं नेताओं का अस्तित्व है, जो जनता के बीच अपने अस्तित्व को पूरी तरह ष्ठ त्म कर पिछले दरवाज़े की राजनीति के माध्यम से स्वयं को प्रभावशाली बनाए रखने में सक्षम हैं. मध्यप्रदेश में कांग्रेस का राजनीतिक भविष्य इन दिनों संकट में है. राज्य में होने वाली चुनावी गतिविधियां कार्यकर्ताओं के गले नहीं उतर पा रही. इसी भ्रम की स्थिति ने मध्यप्रदेश को एक बार फिर पूरी तरह भाजपामय बना दिया है.

संध्या पांडे

feedback.chauthiduniya@gmail.com

राजस्थान का सत्ता संग्राम

राजस्थान में इस बार चुनावी हलचल के साथ कुछ नए समीकरण उभरकर सामने आए हैं. हर बार की तरह इस बार भी राजस्थान में मुख्य मुक़ाबला कांग्रेस और भाजपा में ही है. राज्य की सभी पच्चीस सीटों पर दोनों ही पार्टियां आमने-सामने होंगी. हालांकि बसपा और माकपा दोनों ही राजस्थान में अपनी उपस्थिति दर्ज कराने की कोशिश में है. बसपा यहां नौ सीटों पर चुनाव लड़ रही है. इससे पहले के आम चुनाव में जब बसपा ने उत्तरप्रदेश की सभी 80 सीटों से प्रत्याशी उतारने का फ़ैसला किया था, तब माकपा ने उनसे दो-तीन सीटों पर अपने उम्मीदवार उतारने की मांग की थी. इसके एवज में माकपा के अपने आधार वाले राज्य केरल और पश्चिम बंगाल के लिए मायावती ने सीट मांगी थी, पर माकपा ने मना कर दिया. इसके बाद दोनों की राहें जुदा हो गई थीं. इस बार जबकि दोनों ही पार्टियां राष्ट्रीय स्तर पर अपने पैर पसारने की कोशिश में हैं, दोनों ने फ़ैसला किया है कि वे मिल कर चुनाव लड़ेंगे. बसपा माकपा के चुनाव वाले क्षेत्र पंजाब, मध्य प्रदेश और राजस्थान में साथ देगी, तो माकपा बसपा का साथ उत्तर प्रदेश में देगी. 2007 के विधानसभा चुनाव में बसपा राजस्थान में छह सीटों पर जीती और पंद्रह पर दूसरे नंबर पर रही. ऐसे में मुक़ाबला दिलचस्प होगा. अब तक यह देखा गया है कि बसपा के क़दम राष्ट्रीय स्तर पर मज़बूत ही हुए हैं. नागौर, झुंझुनूं, जोधपुर, बाड़मेर, चुरू और टोंक, सवाई माधोपुर सीटों पर अल्पसंख्यकों की मज़बूत दावेदारी बनती है. लेकिन कांग्रेस के पिछले कुछ चुनावों में अल्पसंख्यकों को उनका हक़ नहीं देने की वजह से मुस्लिम समुदाय का नया तबक़ा अब दूसरे दलों से जुड़ रहा है. कायमखानी और मेव समुदाय के युवा को तो भाजपा से जुड़ने से भी परहेज नहीं है. कभी कांग्रेस के साथ रहे अब्दुल अज़ीज़ इस बार नागौर से बसपा के उम्मीदवार हो गए हैं. नागौर में जाट विरोधी माहौल है, इसका फ़ायदा उन्हें मिल सकता है. कांग्रेस शासित राज्य में सरकार को लेकर गुर्जरों के एक तबके में मीणाओं को साथ लेकर चलने से उनका नुक़सान हो सकता है. राज्य के शेखावटी अंचल की सीटों पर गैर जाट व्यक्ति को जिताने का माहौल बन गया है. वहां से जाट उम्मीदवार का जीतना मुश्किल है. झुंझुनूं सीट पर अभी केंद्रीय मंत्री शीश राम ओला ने कब्ज़ा जमा रखा है. कांग्रेस की ओर से इस बार भी वही चुनाव लड़ेंगे, पर अभी इस इलाक़े में ओला विरोधी माहौल बन गया है. भाजपा का अंतर्कलह इस सीट पर जारी है. यह सीट भाजपा के लिए रणनीतिक महत्व रखती है. झालावाड़ में भाजपा से वसुंधरा राजे के पुत्र दुष्यंत सिंह चुनाव लड़ रहे हैं और कांग्रेस से प्रमोद जैन भाया की पत्नी उर्मिला जैन लड़ रही हैं. जैन का बारां जिले में खासा असर है, जिसका फायदा उन्हें मिल सकता है.

भाजपा को इस चुनाव में भी अपने अंर्तकलह की वजह से मुंह की खानी पड़ सकती है. कांग्रेस ने ब्लॉक अध्यक्ष और साधारण कार्यकर्ताओं और कई महिलाओं को टिकट दिया है. दौसा और टोंक-सवाई माधोपुर में पिछली बार कांग्रेस जीती थी और इस बार भी बढ़त लेने की संभावना है, लेकिन यहां सरकार को समर्थन दे रहे निर्दलीय किरोड़ीलाल मीणा की दावेदारी ने

फच्चर फंसा दिया है. बांसवाड़ा में कांग्रेस आराम की स्थिति में है. कांग्रेस ने बसपा के छह विधायक भी अपने पाले में कर लिए हैं. पिछले साल हुए विधानसभा चुनाव में बसपा के कारण दोनों पार्टियों के समीकरण गड़बड़ा गए थे, दोनो में हार-जीत का अंतर उतना ही था जितना बसपा प्रत्याशी को वोट मिला.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback.chauthiduniya@gmail.com

क्षेत्रीय दलों का खेल बनेगा, राष्ट्रीय दलों का बिगड़ेगा

महाराष्ट्र में कौन दुश्मन है और कौन दोस्त, इसमें बड़ी उलझन है. सामान्य तौर पर लड़ाई कांग्रेस-एनसीपी और भाजपा-शिवसेना के गठबंघन के बीच दिखती है, पर अंदरखाने कुछ और ही नज़र आ रहा है. राज्य की कई सीटों पर शरद पवार की एनसीपी और शिवसेना एक दूसरे से सीधी लड़ाई से बच रहे हैं, ताकि दोनों मिल कर कांग्रेस को निबटा सकें. इस तरह कांग्रेस को एक ओर शिवसेना-भाजपा गठबंधन से लड़ना है, तो दूसरी तरफ अपने सहयोगी शरद पवार से भी सावधान रहना है. रणनीति यह है कि भाजपा एनसीपी से भिड़े और कांग्रेस शिवसेना से. जिन सीटों पर शिवसेना का कांग्रेस से मुकाबला होगा, वहां पर एनसीपी परोक्ष रूप से अपने मराठा प्रतिद्वंद्वी की मदद करेगी. ऐसा अनुमान है कि दो क्षेत्रीय दलों की बिसात में दरअसल कांग्रेस और भाजपा जैसे राष्ट्रीय दल खेत रहेंगे. एनसीपी इस तरह से बिसात बिछा रही है कि कांग्रेस के साथ सीटों के बंटवारे में जो 22 सीटें उसके खाते में आ रही हैं, उनमें कम से कम 15 सीटों पर उसका मुक़ाबला भाजपा से हो. इधर भाजपा की जोड़ीदार शिवसेना की कोशिश भी अपने खाते की 22 सीटों में से ज़्यादातर पर कांग्रेस से लड़ने की है. इस कठिन बिसात के बावजूद यहां के दिग्गज कांग्रेसी नेतागण इन दलों के विरुद्ध रणनीति बनाने के बजाय अपने ही दल में अपने प्रतिद्वंद्वियों की जड़ें काटने में व्यस्त हैं. कांग्रेस के अंदर चल रही इस लड़ाई में दो गुट बन गए हैं, जिनमें एक का नेतृत्व पूर्व मुख्यमंत्री विलासराव देशमुख और दूसरे का अशोकराव चव्हाण कर रहे हैं. अशोक चव्हाण का साथ देने वालों में प्रदेश अध्यक्ष माणिकराव ठाकरे, पूर्व केंद्रीय गृहमंत्री शिवराज पाटिल, पुणे के कांग्रेसी दिग्गज सुरेश कलमाडी एवं विलासराव को हटाकर मुख्यमंत्री बनने के इच्छुक सभी नेता आ जुटे हैं. चव्हाण गुट राज्य में शरद पवार के साथ समझौता कर चुनाव लड़ना चाहता है, ताकि मतों का बंटवारा करके अधिक सीटें लाई जा सके. जबकि देशमुख केंद्रीय नेताओं को यह समझाने में जुटे हैं कि कांग्रेस अकेले लड़े, तो उसकी कम से कम चार सीटें ज़्यादा आ सकती हैं. इस लड़ाई में शिवराज पाटिल एवं नारायण राणे जैसे नेता अशोक चव्हाण के साथ इसलिए खड़े हैं, क्योंकि चुनाव के दौरान इन दोनों को 'देशमुख नीति' का शिकार होना पड़ेगा. देशमुख कोंकण के रायगढ़ लोकसभा क्षेत्रों से अब्दुर्रहमान अंतुले को चुनाव लड़ने के लिए ललकार रहे हैं, जबकि यह सीट पूरी तरह शिवसेना के अनुकूल बन चुकी है. कोंकण की सीट होने के कारण इसे जितवाने की ज़िम्मेदारी नारायण राणे की होगी. यदि इस सीट पर कांग्रेस हारी, तो यह अंतुले के साथ-साथ राणे की भी हार मानी जाएगी. इसी प्रकार देशमुख अशोक चव्हाण के गृहनगर नांदेड़ से शिवराज पाटिल को लड़वाने की जुगत भिड़ा रहे हैं. ताकि वहां पाटिल को हरवा कर उनकी हार का ठीकरा मुख्यमंत्री अशोक चव्हाण के सर फोड़ा जा सके.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback.chauthiduniya@gmail.com

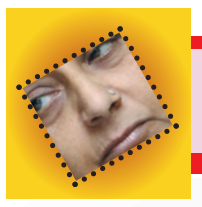

बिहार में इस बार बिखर जाएंगे दिग्गजों के दावे

पंद्रहवीं लोकसभा चुनाव में बिहार की कुल 40 सीटों पर चार चरणों में चुनाव होना है. इस चुनाव में 9 ऐसे अभागे सांसद हैं, जो 14वीं लोकसभा के तो सदस्य थे, लेकिन इस बार वे लोग चुनावी दंगल से बाहर हैं. इनमें 7 राजद के, 1 लोजपा के और 1 जदयू के सांसद हैं. ऐसे में गया के राजेश कुमार मांझी, नवादा के वीरचंद पासवान, जहानाबाद के गणेश प्रसाद सिंह, पटना के रामकृपाल यादव, सिवान के शहाबुद्दीन, बाढ़ के विजयकृष्ण, मधेपुरा के राजेश रंजन उर्फ पप्पू यादव, बलिया के सूरजभान सिंह और बगहा के कैलाश बैठा इस बार संसद से बाहर रहेंगे. इस बार राजेश कुमार मांझी के बदले राजद ने गया से रामजी मांझी को, गणेश प्रसाद सिंह के बदले सुरेंद्र सिंह यादव को जहानाबाद से, शहाबुद्दीन के बदले उनकी बीवी हिना शहाब को सिवान से चुनाव मैदान में उतारा है, जबकि वीरचंद पासवान की नवादा सीट सुरक्षित से सामान्य हो गई और रामकृष्ण यादव की पटना सीट नए परिसीमन में बंट गई है. विजयकृष्ण की बाढ़ सीट विलोपित कर दी गई है. मो शहाबुद्दीन और पप्पू यादव को सज़ायाफ्ता होने के कारण चुनाव लड़ने की अनुमति नहीं मिली है. यही हाल बलिया के लोजपा सांसद सूरजभान सिंह का भी है. जदयू सांसद कैलाश बैठा की बगहा सुरक्षित सीट भी नए परिसीमन में विलोपित हो गई है. इनमें विजयकृष्ण और गणेश प्रसाद सिंह दूसरी जगह से सीट नहीं मिलने के कारण अपनी पार्टी राजद से बगावत कर जदयू में शामिल हो गए हैं. इसी तरह पप्पू यादव भी राजद को छोड़ कांग्रेस की गोद में जा बैठे हैं.

14वीं लोकसभा के दो सदस्य अनिरुद्ध प्रसाद उर्फ साधु यादव का गोपालगंज क्षेत्र सुरक्षित हो जाने के कारण पार्टी ने उन्हें अपना टिकट नहीं दिया, तो बागी होकर कांग्रेस के टिकट पर पश्चिम चंपारण से चुनावी मैदान में डटे हैं. इसी तरह बांका के सांसद गिरधारी यादव पार्टी का टिकट न मिलने से बगावत कर कांग्रेस के टिकट पर चुनाव लड़ रहे हैं. अररिया के भाजपा सांसद सुखदेव पासवान का क्षेत्र सुरक्षित से सामान्य हो जाने के कारण उनकी जगह प्रदीप कुमार सिंह को भाजपा ने उम्मीदवार बनाया है. ऐसे में सुखदेव पासवान निर्दलीय चुनाव लड़ने पर आमदा हैं.

इस चुनाव में भारत सरकार के 4 केंद्रीय मंत्री और 7 राज्य मंत्री चुनाव मैदान में हैं. वे हैं लालू प्रसाद यादव, रामविलास पासवान, रघुवंश प्रसाद सिंह, मीरा कुमार, डॉ शकील अहमद, रघुनाथ झा, अखिलेश प्रसाद सिंह, मो अली अशरफ फातमी, कांति सिंह, तस्लीमुद्दीन और जयप्रकाश नारायण यादव. इनके अलावा भारत सरकार के 12 पूर्व केंद्रीय और राज्यमंत्री चुनावी मैदान में है. इनमें जॉर्ज फर्नांडिस, देवेंद्र प्रसाद यादव, सैयद शहनवाज हुसैन, शत्रुघ्न सिन्हा, शरद यादव, हुकुमदेव नारायण यादव, निखिल कुमार चौधरी, राजीव प्रताप रूढ़ी, मुन्नी लाल, जय नारायण प्रसाद निषाद, दिग्विजय सिंह और केके तिवारी शमिल है. इनमें जॉर्ज फर्नांडिस, देवेंद्र प्रसाद यादव, सैयद शहनवाज हुसैन, मो तस्लीमुद्दीन, निखिल कुमार चौधरी 14वीं लोकसभा के सदस्य हैं. शेष मंत्री पिछले चुनाव में हार का मुंह देख चुके हैं. इस बार कमर कस सभी 15वीं लोकसभा का चुनाव में जीतने के जुगाड़ में लगे-भिड़े हैं.

इस चुनाव में ऐसे भी कई पूर्व सांसद हैं, जो 14वीं लोकसभा के सदस्य नहीं थे और अभी चुनावी दंगल में ताल ठोंक रहे हैं, वे हैं – भाजपा के राजीव प्रताप रूढी, भाजपा के हुकुमदेव नारायण यादव, रमादेवी, कीर्ति आजाद, शत्रुघ्न प्रसाद सिन्हा एंव राधामोहन सिंह, मुनीलाल, राजद के शकुनी चौधरी, सुरेंद्र प्रसाद यादव, अनिल कुमार, जनता दल (यूनाइटेड) के वृषिण पटेल, दिनेशचंद्र यादव, मंगनीलाल मंडल, रंजन प्रसाद यादव, जयनारायण प्रसाद निषाद, बहुजन समाज पार्टी के अनवारूल हक़, भाकपा (माले) के रामेश्वर प्रसाद तथा निर्दलीय रामाश्रय प्रसाद सिंह, जो पहले सीपीआई में थे, भाकपा के शत्रुघ्न प्रसाद सिंह एवं माकपा के सुबोध राय.

इस चुनाव में बिहार के दो पूर्व मुख्यमंत्री लालू प्रसाद यादव और रामसुंदर दास के साथ अन्य कई विधान मंडलों के सदस्य अलग-अलग पार्टियों के टिकट पर 15वीं लोकसभा में प्रवेश के लिए धक्का-मुक्की करते नज़र आ रहे हैं. पटना उच्च न्यायालय के दो वरिख़अधिवक्ता मनन मिश्र बसपा के टिकट पर वाल्मीकि नगर से और शकील अहमद खां राजद के टिकट पर औरंगाबाद लोकसभा सीट से चुनाव जीतने के लिए ज़ोर मार रहे हैं.

बिहार सरकार के वर्तमान मंत्रियों में वृषिण पटेल सिवान से, भोला सिंह नवादा से, दिनेशचंद्र यादव खगड़िया से, दामोदर राउत बांका से उम्मीदवार हैं.

इस चुनाव में दो पार्टियों के राष्टीय अध्यक्ष लोकजनशक्ति पार्टी के रामिवलास पासवान और राष्टीय जनता दल के लालू प्रसाद यादव चुनावी दंगल में हैं, तो वहीं राष्टीय जनता दल बिहार प्रदेश अध्यक्ष अब्दुल बारी सिद्दीकी, भाजपा के प्रदेश अध्यक्ष राधामोहन सिंह और जनता दल (यूनाइटेड) के प्रदेश अध्यक्ष राजीव रंजन सिंह भी तकदीर आजमा रहे हैं.

इस बार न्यायालय के दांव-पेंच में फंसे कई बाहुबलियों ने अपनी पत्नी को चुनाव मैदान में उतारा है. लोजपा के सूरजभान सिंह की पत्नी वीणा देवी नवादा से, मो शहाबुद्दीन की बीवी हिना सहाब सिवान से, पप्पू यादव की पत्नी रंजीता रंजन सुपौल से, आनंद मोहन की पत्नी लवली आनंद शिवहर से चुनाव मैदान में खड़ी हैं. इनके अलावा जो बाहुबली स्वयं चुनावी मैदान में हैं, उनमें प्रभुनाथ सिंह, तस्लीमुद्दीन, सुरेंद्र प्रसाद यादव, अनवारुल हक़, विजय कुमार शुक्ला, साधु यादव, रामकिशोर सिंह, महाबली सिंह, अखिलेश सिंह, राजवल्लभ प्रसाद, कौशल यादव और शकुनी चौधरी प्रमुख हैं.

बिहार के विधायकों में पूर्णमासी राम, बैजनाथ प्रसाद महतो, अनिल कुमार, अमरनाथ यादव, रामकिशोर राम, अब्दुल बारी सिद्दीक़ी, अश्वमेघ देवी, महेश्वर हजारी, रामदेव वर्मा, डॉ अशोक कुमार, भोला सिंह, अनिल चौधरी, विश्वमोहन, दिनेशचंद यादव, किशोर कुमार मुन्ना, प्रदीप कुमार सिंह, भूदेव चौधरी, दामोदर रावत, शकुनी चौधरी, मोनाजिर हसन, सुनीला देवी, श्याम रजक, अरुण सिंह, जगदानंद, महाबली सिंह, ललन पासवान, जगदीश शर्मा, सुरेंद्र यादव, अवधेश सिंह, शकील अहमद खां, हरि मांझी, पूर्णिमा यादव, कौशल यादव, बलिराम सिंह यादव, समीर कुमार महासेठ, सतीश कुमार और रामबदन राय लोकसभा में जाने को आतुर हैं एवं इसी क्रम में विभिन्न क्षेत्रों से खड़े हैं, उनकी संख्या 40 के करीब हैं.

इस बार कई सीटों पर विभिन्न पार्टियों ने दल-बदलुओं को भी टिकट से नवाजा है. लोजपा ने राजद के भगेड़ू भगवान लाल साहनी को मुज़फ्फरपुर से खड़ा किया है. वहीं सुपौल की निवर्तमान सांसद रंजीता रंजन ने लोजपा छोड़ कर कांग्रेस के टिकट पर चुनाव लड़ने का फ़ैसला किया है. राजद ने मुंगेर से जदयू के विधान पार्षद रामबदन राय को टिकट थमाया है. जदयू ने भाजपा से आयातित और राजद का चक्कर लगा चुके जय नारायण निषाद को मुजफ्फरपुर से उतारा है. उसी तरह जदयू ने राजद से आयातित और मंगनीलाल मंडल को झंझारपुर से, लोजपा से आयातित महेश्वर हजारी को समस्तीपुर (सु) से और रंजन प्रसाद यादव को पाटलिपुत्र से टिकट दिया है. भाजपा ने राजद से पाला बदल कर आई रमादेवी को शिवहर से अपना उम्मीदवार बनाया है. कांग्रेस, जो लगभग बिहार में 18-20 वर्षों से लोकसभा चुनाव में कोई महत्वपूर्ण भूमिका नहीं रही, इस बार उसके सभी 40 सीटों पर चुनाव में लड़ने की परिस्थिति उत्पन्न हो गई, तो उसके पास उम्मीदवारों का ही टोटा पड़ गया. नतीजतन कांग्रेस अभी सभी पार्टियों के विक्षुब्धों की शरणस्थली बन गई है. राजद के साधु यादव को पूर्वी चंपारण से, रमई राम को गोपालगंज (सु) से, गिरधारी यादव को बांका से, लोजपा के अरुण कुमार को जहानाबाद से, जदयू के रामस्वरूप प्रसाद को नालंदा से लवली आनंद को शिवहर से कांग्रेस ने अपना उम्मीदवार बनाया है. इसी कारण से कांग्रेस नेत्री वीणा शाही ने टिकट बेचने का आरोप लगा कर पार्टी छोड़ दी. विदित हो कि वीणा शाही कांग्रेसी विधायकों में सबसे अधिक पढ़ी-लिखी और समझदार नेत्री हैं. उनके ससुर एलपी शाही आज की तारीख में सबसे बुजुर्ग और सक्रिय कांग्रेसी हैं.

प्रभात कुमार शांडिल्य
feedback.chauthiduniya@gmail.com

विदिशा में कांग्रेस की किरकिरी

भाजपा की शीर्ष नेता और दिल्ली की पूर्व मुख्यमंत्री सुषमा स्वराज के विरुद्ध कांग्रेसी उम्मीदवार राजकुमार पटेल लड़ने से पहले ही धराशायी हो गये. मध्यप्रदेश में यह अफवाह आम है कि राजकुमार पटेल ने सुषमा स्वराज के विरुद्ध जान-बूझ कर की गई ग़लती की पूरी क़ीमत भाजपा से ली है. पटेल मध्यप्रदेश की राजनीति में पूर्व मुख्यमंत्री दिग्विजय सिंह के क़रीबी माने जाते हैं. विदिशा संसदीय सीट से सुषमा स्वराज के विरुद्ध नामांकन भरने के पूर्व राजकुमार पटेल, पूर्व मुख्यमंत्री सुंदरलाल पटवा और वर्तमान मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान के ख़िलाफ़ भी प्रत्याशी बन कर चुनाव हार चुके हैं.

मध्यप्रदेश में यह अफवाह आम है कि राजकुमार पटेल ने सुषमा स्वराज के खिलाफ जान-बूझ कर की गई गलती की पूरी कीमत भाजपा से ली है. पटेल मध्यप्रदेश के पूर्व सीएम और दिग्गज कांग्रेसी नेता दिग्विजय सिंह के करीबी माने जाते हैं.

राजकुमार पटेल का बलिदान कांग्रेस के इतिहास में युवा वर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाले एक दमदार नेता के रूप में रहा है. उल्लेखनीय है कि पटेल की भाभी और कांग्रेस की स्वीकार्य नेता विभा पटेल भोपाल नगर निगम में महापौर पद पर कार्यकाल पूर्ण कर चुकी हैं.

राजकुमार पटेल के विदिशा संसदीय क्षेत्र से नामांकन रद्द होने की व्यापक प्रतिक्रिया कांग्रेस में हुई है. दबी जुबान में इसे करोड़ों का सौदा माना गया है. सुषमा स्वराज के संसदीय क्षेत्र से मुक्त होने के मायने यही हैं कि मध्यप्रदेश सहित देश के सभी लोकसभा क्षेत्रों में सुषमा स्वराज अब भाजपा के लिए बेफिक्र होकर चुनाव प्रचार कर सकेंगी. संसदीय क्षेत्र से प्राप्त जानकारी के अनुसार वर्तमान चुनाव में भी सुषमा स्वराज राजकुमार पटेल पर कहीं भारी थीं. यह संभावना व्यक्त की जा रही थी कि भाजपा के विरुद्ध कांग्रेस अपने प्रचार अभियान में राज्य सरकार के विरुद्ध कई मुद्दों को मंच देने के लिए विदिशा संसदीय क्षेत्र का उपयेग किया जाएगा. पूर्व मुख्यमंत्री दिग्विजय सिंह, वर्तमान केंद्रीय मंत्री ज्योतिरादित्य सिंधिया और पार्टी अध्यक्ष सोनिया गांधी के भी इस क्षेत्र में चुनाव अभियान चलाने की संभावनाएं व्यक्त की जा रही थीं. चुनाव में कांग्रेस के युवा नेतृत्व का प्रतिनिधित्व करनेवाले राहुल गांधी की सक्रियता के लिए विदिशा का उपयोग किया जाना प्रस्तावित था. राजकुमार पटेल द्वारा किये गये कृत्य को स्वयं राजकुमार पटेल द्वारा भूलवश की गई कार्यवाही बताते हैं जबकि कांग्रेस के कई नेताओं का मानना है कि पटेल अपने राजनैतिक जीवन पर पहली बार निर्वाचन पर्चा नहीं भर रहे थे. उल्लेखनीय है कि इस सीट पर राजकुमार पटेल के नाम की घोषणा के साथ ही विवादों का जन्म हुआ था. क्योंकिराजकुमार पटेल स्वयं बुदनी क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करते हैं.

संध्या पांडे
feedback.chauthiduniya@gmail.com

दुनिया

माई समीकरण फिर मज़बूत हो रहा है

राजग और कांग्रेस के लिए ख़तरे की घंटी

प्रभात कुमार शांडिल्य

पंद्रहवीं लोकसभा चुनाव 2009 के दूसरे चरण में 23 अप्रैल 2009 को बिहार के कुल 13 लोकसभा क्षेत्रों में चुनाव होने हैं. इनमें कई लोकसभा क्षेत्र ऐसे भी हैं, जिनका नाम और भूगोल नए परिसीमन में बदल गया है. अपनी पुरानी पार्टी छोड़ कर नई पार्टी से चुनाव लड़ने वाले कई अभ्यार्थी भी शामिल हैं. साधु यादव, रमई राम, लवली आनंद, प्रकाश झा, रंजीता रंजन, जयनारायण प्रसाद निषाद, मंगनीलाल मंडल आदि कई नाम हैं, जिन्होंने पार्टी का टिकट नहीं मिलने की स्थिति में पाला बदल लिया है. ऐसी स्थिति में कौन किसे पटकनी देगा, कहना मुश्किल जान पड़ता है. दूसरे चरण में जहां चुनाव होने वाले हैं, उनके नाम हैं – वाल्मीकिनगर, पश्चिम चंपारण, पूर्वी चंपारण, शिवहर, सीतामढ़ी, मधुबनी, झंझारपुर, दरभंगा, मुज़फ्फरपुर, वैशाली, हाजीपुर (सु), उजियापुर, समस्तीपुर. इन लोकसभा क्षेत्रों में कहीं दो उम्मीदवारों के बीच सीधी टक्कर है, तो कहीं त्रिकोणात्मक संघर्ष है, तो कहीं बहुकोणीय. बिहार के चुनाव परिणाम इस बार अलग तरह के हो सकते हैं. आइए डालते हैं, अलग-अलग लोकसभा क्षेत्रों पर एक नज़र...

वाल्मीकिनगर

यह नए परिसीमन में बना नया लोकसभा क्षेत्र है, जिसका नाम वाल्मीकि ऋषि के नाम पर रखा गया है. ऐसी मान्यता है कि निर्वासित सीता के पुत्रों लव-कुश का जन्म इसी स्थान पर हुआ था. परिसीमन से पहले यह क्षेत्र बगहा (सु) के नाम से जाना जाता था, जहां से 2004 में जदयू के कैलाश बैठा जीते थे. 15वीं लोकसभा चुनाव में राजद के रघुनाथ झा, जदयू के बैजनाथ प्रसाद महतो के अलावा उच्च न्यायालय के वरिष्ठ अधिवक्ता मनन मिश्र बसपा के टिकट पर चुनाव लड़ रहे हैं. यहां दलित और ब्राह्मण मतदाताओं की संख्या अधिक है. यह क्षेत्र उत्तरप्रदेश का पड़ोसी क्षेत्र है. इस कारण बसपा प्रत्याशी मनन मिश्र का पलड़ा भारी दिखता है. यहां कुशवाहा और मुस्लिम मतदाताओं की भी अच्छी संख्या है. ऐसे में रघुनाथ झा और बैजनाथ महतो लड़ाई को त्रिकोणात्मक बनाए रखेंगे. रघुनाथ झा, बैजनाथ महतो पर भारी पड़ रहे हैं. यहां के कुल बारह लाख अड़तालीस हज़ार एक सौ एकतालीस मतदाता उम्मीदवारों के भाग्य का फ़ैसला करने वाले हैं.

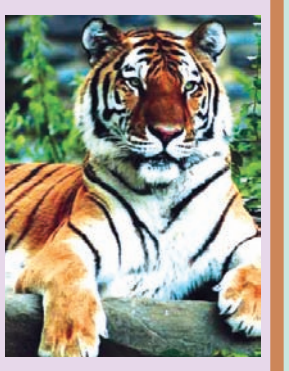

पश्चिम चंपारण

यह पहले बेतिया संसदीय क्षेत्र के नाम से जाना जाता था, नए परिसीमन में पश्चिमी चंपारण हो गया. यह वही क्षेत्र है, जहां 1917 में महात्मा गांधी, राजकुमार शुक्ल के बुलावे पर आए थे. 2004 के चुनाव में राजद के रघुनाथ झा ने भाजपा के मदन प्रसाद जायसवाल को करीब चौबीस हज़ार मतों से मात दे दी थी. इस बार यहां से राजद के बागी लालू के साले बाहुबली अनिरुद्ध प्रसाद उर्फ साधु यादव कांग्रेस, मदन जायसवाल के पुत्र संजय जायसवाल भाजपा, फिल्ममेकर प्रकाश झा लोजपा, शंभुनाथ गुप्ता बसपा और सीपीएम से रामाश्रय सिंह प्रमुख उम्मीदवार हैं. साधु-संजय-प्रकाश की आपसी लड़ाई में ईमानदार छवि के सीपीएम उम्मीदवार रामाश्रय सिंह बाज़ी मार ले जाएं, तो यह आश्चर्य की बात नहीं होगी. यहां के क़रीब बारह लाख मतदाताओं के हाथ में उम्मीदवारों की जीत-हार का फैसला है. वैसे रामाश्रय बाबू को प्रकाश झा के धनबल और ग्लैमर और राजद-लोजपा के गठजोड़ के फलस्वरूप मज़बूत हुए एमवाई समीकरण से मिल रही चुनौतियों का सामना करना होगा.

पूर्वी चंपारण

यह पहले मोतिहारी के नाम से जाना जाता था, नए परिसीमन में नाम के साथ भूगोल भी बदला है. 1917 में मोतिहारी महात्मा गांधी के चंपारण सत्याग्रह का मुख्य केंद्र था. 2004 के चुनाव में राजद के बाहुबली अखिलेश प्रसाद सिंह ने भाजपा के राधामोहन सिंह को हराया था. इस बार चुनावी अखाड़े में राजद के अखिलेश प्रसाद सिंह, भाजपा के राधामोहन सिंह, बसपा के गगनदेव यादव के अलावा कई और भी हैं, लेकिन असली मुक़ाबला अखिलेश सिंह और राधामोहन सिंह के बीच ही है. अखिलेश सिंह जहां भूमिहार जाति से आते हैं, वहीं राधामोहन सिंह राजपूत जाति से हैं. अखिलेश प्रसाद सिंह लालू के खास चहेते हैं, तो वहीं राधामोहन सिंह भाजपा के वरिष्ठ नेता हैं. कांटे के इस मुक़ाबले में राधामोहन बीस नज़र आते हैं. लेकिन राजपूतों का एनडीए से बढ़ता दुराव उनके लिए ष्ठ तरनाक साबित हो रहा है. कुल 1165094 मतदाता इनके भाग्य का बटन दबाएंगे.

हाजीपुर (सु)

गंगा के उस पार चिनिया केले की खेती के लिए मशहूर हाजीपुर में सोनपुर का विश्वप्रसिद्ध पशु मेला लगता है. यहां बाबा हरिहरनाथ का मंदिर है और यहां से मौजूदा सांसद रामविलास पासवान हैं. 2004 में पासवान ने जदयू के छेदी पासवान को दो लाख से भी अधिक वोटों से हराया था. रामविलास पासवान ने 1977 में सबसे ज़्यादा मतों से जीतने का रिकॉर्ड भी हाजीपुर से ही बनाया था. इस बार रामविलास के अलावा जदयू के रामसुंदर दास, कांग्रेस के दशई चौधरी मुख्य उम्मीदवार हैं. यहां मुक़ाबला बस नाम का है. वैसे रामविलास पासवान की जीत पक्की है. उनका चुनाव चिन्ह बंगला स्टील का बन गया है, जिसे तीर छेद पाएगा, इसमें संदेह है.

शिवहर

शिवहर लोकसभा क्षेत्र का भूगोल परिसीमन के बाद काफी बदल गया है. 2004 में राजद के सीताराम सिंह ने भाजपा के अनवारुल हक़ को 13883 मतों से पराजित किया था. यहां से कांग्रेस की रामदुलारी सिन्हा, बाहुबली आनंद मोहन चुनाव जीत चुके हैं. इस बार राजद से सीताराम सिंह, भाजपा से राजद की बागी रमा देवी, आनंद मोहन की पत्नी लवली आनंद कांग्रेस से और अनवारुल हक़ बसपा से चुनाव में खड़े हैं. रामदुलारी सिन्हा के बेटे को टिकट न मिलने से लवली आनंद की हालत ठीक नहीं दिखती. यहां मुख्य मुक़ाबला राजद के सीताराम सिंह और बसपा के अनवारुल हक़ के बीच है. कई बड़े नामों के होने से मुक़ाबला दिलचस्प है. अभी सबसे आगे सीताराम सिंह ही दिखते हैं. कुल 1235112 मतदाता इनके भाग्य का फ़ैसला करेंगे.

सीतामढ़ी

पौराणिक आख्यान के अनुसार माता सीता की जन्मभूमि सीतामढ़ी है. यहां से 1957 का चुनाव प्रसिद्ध समाजवादी नेता जेबी कृपलानी ने जीता था. 2004 के चुनाव में राजद के सीताराम यादव ने जदयू के नवल किशोर राय को 98,005 मतों से पराजित किया था. इस बार राजद से सीताराम यादव, जदयू से अर्जुन राय और बसपा से शाहू माया शंकर शरण मुख्य उम्मीदवार हैं. जदयू के अर्जुन राय को मंत्री पद से हटाए जाने के बाद यह उम्मीदवारी दी गई है. यहां माई समीकरण मज़बूत दिखता है. ऐसे में सीताराम यादव की जीत पक्की समझी जानी चाहिए. यहां के कुल 1286800 मतदाता अपने मत का प्रयोग करेंगे. पूर्व से भी यह सीट यादव नेताओं के लिए सुरक्षित सीट मानी जाती रही है. पूर्व लोकसभाध्यक्ष बलिराम भगत और नागेंद्र प्रसाद यादव कई बार जीतते रहे हैं.

मधुबनी

यह मिथिला क्षेत्र का प्रमुख स्थान है, जो मधुबनी चित्रकला के लिए विश्वप्रसिद्ध है. ऐसी मान्यता है कि पुराने ज़माने में यहां के जंगलों में मधु के छत्ते बहुत पाए जाते थे, जिस कारण इसका नाम मधुबनी पड़ा. 2004 के चुनाव में कांग्रेस के डॉ शकील अहमद ने भाजपा के हुकुमदेव नारायण यादव को 87079 मतों से हराया था. इस बार के चुनाव में कांग्रेस से डॉ शकील अहमद, राजद से प्रदेश अध्यक्ष अब्दुल बारी सिद्दीक़ी, भाजपा के हुकुमदेव नारायण यादव, सीपीआई से हेमचंद झा, बसपा से लक्ष्मीकांत मिश्र मुख्य उम्मीदवारों में हैं. यहां भी माई समीकरण मज़बूत है. ऐसे में शकील अहमद पर राजद के अब्दुल बारी सिद्दीक़ी भारी पड़ रहे हैं. एक यादव मतदाता ने नामांकन के दिन ही यह टिप्पणी की थी कि हुकुमदेव नारायण यादव को यहां की जनता दिल्ली नहीं भेजना चाहती. उन्हें डर है कहीं वे फिर नई शादी न रचा लें. मुक़ाबला कांग्रेस और राजद के बीच दिलचस्प है. कुल 1373215 मतदाता यहां अपने वोट का प्रयोग कर सकेंगे. डॉ शकील अहमद के पाटलिपुत्र क्षेत्र से भी चुनाव लड़ने की ष्ठ बर से इस बात का ज़ोर बढ़ गया है कि उनके पांव के नीचे की ज़मीन खिसक चुकी है और वे सिद्दीक़ी से अपनी हार मान चुके हैं.

वैशाली

यह भगवान महावीर की जन्मस्थली के साथ-साथ पुराना गणतंत्र रहा है. आम्रपाली वैशाली की प्रख्यात नववधू थी, जिनके घर भगवान बुद्ध ने भोजन किया था. राष्ट्रीय चिन्ह अशोक स्तंभ वैशाली में ही है. वैशाली का प्राचीन काल से ही ऐतिहासिक महत्व रहा है. 2004 के चुनाव में राजद के रघुवंश प्रसाद सिंह ने निर्दलीय विजय कुमार शुक्ला उर्फ मुन्ना शुक्ला को 105935 मतों के भारी अंतर से हराया था. इस बार भी मुख्य मुक़ाबला इन दोनों के बीच ही होगा. क्षेत्र से जुड़ाव और काम के आधार पर रघुवंश प्रसाद सिंह को वैशाली से जीतने में कोई कठिनाई नहीं जान पड़ती. यहां के कुल 1256436 मतदाता मतदान करेंगे.

झंझारपुर

यहां का भौगोलिक परिदृश्य नए परिसीमन के बाद बिल्कुल बदल गया है. 2004 के लोकसभा चुनाव में राजद के देवेंद्र प्रसाद यादव ने जदयू के जगन्नाथ मिश्र को 12,835 मतों के मामूली अंतर से हराया था. इस बार यहां राजद के देवेंद्र प्रसाद यादव, जदयू के मंगनी लाल मंडल कांग्रेस के कृपानाथ पाठक व बसपा के गौरीशंकर यादव मुख्य उम्मीदवार हैं. लेकिन मुख्य मुक़ाबला गुरु और शिष्य के बीच ही है. ज्ञात हो कि मंगनी लाल मंडल, देवेंद्र प्रसाद यादव के राजनीतिक गुरु रहे हैं. यहां का मज़बूत माई समीकरण एक बार फिर से गुरु गुड़ और चेला चीनी की कहावत को सच साबित कर सकता है. देवेंद्र प्रसाद यादव अपने गुरु मंगनी लालमंडल पर भारी पड़ रहे हैं. यहां के कुल 1396762 मतदाता चुनावी भाग्य का फैसला करेंगे. मंगनी लाल मंडल जदयू में अकेले रह गए हैं, उनके सभी कार्यकर्ता राजद में ही छूट गए हैं, जिसके कारण उन्हें चेले को टक्कर देने में भारी असुविधा हो रही है.

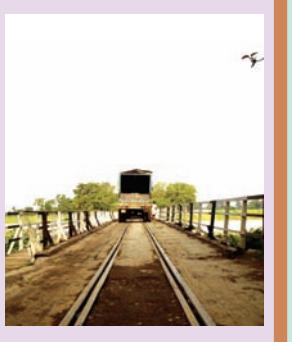

दरभंगा

यह मिथिला क्षेत्र का सबसे पुराना शहर रहा है. नए परिसीमन के बाद दरभंगा लोकसभा क्षेत्र का भूगोल काफी बदला है. 2004 में यहां से राजद के मो अली अशरफ फातमी ने भाजपा के क्रिकेट खिलाड़ी कीर्ति आज़ाद को 1,43,463 मतों के भारी अंतर से मात दी थी. इस बार यहां से राजद के मो अली अशरफ फातमी, भाजपा के कीर्ति आज़ाद, कांग्रेस के अजय अलान और बसपा के युगेश्वर साहनी मुख्य उम्मीदवार हैं. यहां भी माई समीकरण सही सलामत है. ऐसे में अली अशरफ फातमी की गोटी इस बार भी लाल दिखती है. कीर्ति आज़ाद चुनाव के बाद नेता कम, क्रिकेटर अधिक दिखते हैं, जिस कारण राजद उम्मीदवार को मैदान मारने में कोई परेशानी नहीं दिखती है. यहां मतदाताओं की कुल संख्या 1269490 है.

मुज़फ्फरपुर

यहां से 2004 में जदयू के जॉर्ज फर्नांडिस ने राजद के भगवान लाल साहनी को 9693 मतों के मामूली अंतर से हराया था. इस बार जदयू के लिए जी का जंजाल बना मुज़फ्फरपुर सीट से जार्ज फर्नांडिस निर्दलीय, जयनारायण प्रसाद निषाद जदयू, भगवान लाल साहनी लोजपा, विनिता विजय कांग्रेस से, समीर कुमार बसपा से और विजेंद्र चौधरी निर्दलीय प्रत्याशी हैं. इस बार यहां का मुक़ाबला काफी दिलचस्प होगा. जदयू ने जॉर्ज फर्नांडिस को बीमारी का बहाना बना कर सीट नहीं दिया. उल्टे दलबदलू जयनारायण प्रसाद निषाद को जदयू ने अपना उम्मीदवार बनाया. राजद के बागी भगवान लाल साहनी लोजपा के उम्मीदवार बने, जो आरएसएस के पसंदीदा हैं. दोनों स्वजातीय साहनी और निषाद की आपसी लड़ाई में निर्दलीय जॉर्ज फर्नांडिस इस बार भी मैदान मारने के क़रीब हैं. 1977 में जॉर्ज जेल में रह कर भी यहां से भारी बहुमत से जीते थे. इस बार बीमार फर्नांडिस अस्पताल में रह कर भी चुनाव जीत जाएं, तो आश्चर्य नहीं होगा. जदयू के राष्ट्रीय उपाध्यक्ष और पूर्व मंत्री रामजीवन सिंह, बिहार विधानसभा के पूर्व उपाध्यक्ष गजेंद्र प्रसाद हिमांशु और एमपी के समाजवादी नेता और शरद यादव के राजनीतिक गुरु रघु ठाकुर के लगातार जनसंपर्क बनाने और जनसभाओं को संबोधित करने से जॉर्ज की अस्वस्थता की भरपाई हो रही है. साथ ही पूर्व राष्ट्रपति भैरों सिंह शेखावत और जदयू के दिग्विजय सिंह के प्रचार में लगने से जॉर्ज की स्थिति मज़बूत होती जा रही है. मुज़फ्फरपुर की जनता योग्य उम्मीदवार को तरजीह देती रही है. इस बार लड़ाई सीधे जदयू और जॉर्ज के बीच है.

उजियारपुर

नए परिसीमन में इसे नया लोकसभा क्षेत्र बनाया गया है, जो कुशवाहा बहुल क्षेत्र है. यह पहले रोसड़ा (सु) का हिस्सा था. इसी क्षेत्र के चलते नागमणि ने बड़े नाटकीय ढंग से जदयू का साथ छोड़ राजद का हाथ थामा था. 2004 के चुनाव में रोसड़ा में लोजपा के रामसुंदर पासवान ने जदयू के दशई चौधरी को हराया था. इस बार उजियारपुर सामान्य सीट है, जहां से राजद के आलोक कुमार मेहता, जदयू से अश्वमेध देवी, कांग्रेस से शील कुमार राय, सीपीएम के रामदेव वर्मा और बसपा के विजयवंत चौधरी मैदान में खड़े हैं. यहां असली मुक़ाबला सीपीएम और राजद के बीच होने की संभावना है. प्रतिष्ठित नेता रामदेव वर्मा का पलड़ा ज़रा भारी नज़र आता है. यहां कुल 1207857 मतदाता हैं.

समस्तीपुर (सु)

नए परिसीमन में नाम तो नहीं बदला, पर यह क्षेत्र सुरक्षित कर दिया गया. 2004 में राजद के आलोक कुमार मेहता ने जदयू के रामचंद्र सिंह को 126783 मतों से हराया था. इस बार लोजपा के रामचंद्र पासवान, जदयू के महेश्वर हजारी, बसपा के डॉ बिंदेश्वर राम, कांग्रेस से अशोक कुमार मैदान में हैं. रामचंद्र पासवान और रामदेव हजारी के पुत्र महेश्वर हजारी आपस में ममेरे-फुफेरे भाई हैं. मुक़ाबला भी दोनों भाइयों के बीच में ही होता दिखता है. यहां 1280790 मतदाता इनके भाग्य का फ़ैसला करेंगे.

feedback.chauthiduniya@gmail.com

दहशत का दूसरा नाम सलवा जुडुम

किससे किसको ख़तरा है? सरकार कहती है कि ग़रीब आदिवासियों को नक्सलियों से ख़तरा है और आदिवासियों की सुरक्षा करना राज धर्म है. जैसे भी हो, उसका पालन किया जाना है. उस बड़े काम के लिए पुलिस बल नाक़ाफी है. इसलिए सीआरपीएफ है, सीईएसएफ है, नगा और मिजो बटालियन है. दुर्गम इलाक़ों में बागियों से लड़ने का प्रशिक्षण देने के लिए बाक़ायदा स्कूल है. और सबसे आगे सलवा जुडुम है और नक्सलियों से निबटने के लिए हथियारबंद नागरिकों का दस्ता, जिन्हें विशेष पुलिस अधिकारी (एसपीओ) का दर्जा हासिल है. पुलिस और सुरक्षा बलों के साथ क़दमताल करते हुए सलवा जुडुम और उसके एसपीओज़ आदिवासियों को नक्सली कहर से बचाने की मुहिम पर हैं. सलवा जुडुम को भारी चिंता है कि आदिवासी गांवों में असुरक्षित हैं और उनका भला इसी में है कि उन्हें सलवा जुडुम के कैंपों में पहुंचा दिया जाए. बड़ी मुश्किल यह है कि आदिवासी नक्सली ख़तरे को समझ नहीं पा रहे और अपने पहाड़-जंगल की गोद को छोड़ कर सलवा जुडुम की छत्रछाया में रहने को तैयार नहीं. इस इनक़ार का मतलब है कि आदिवासी नक्सली हैं या नक्सलियों के असर में हैं और उनके मददगार हैं. उन्हें सबक सिखाने की ज़रूरत है. सबसे पहले तो उन्हें सरकारी

बड़ी मुश्किल यह है कि आदिवासी नक्सली ख़तरे को समझ नहीं पा रहे और अपने पहाड़-जंगल की गोद को छोड़ कर सलवा जुडुम की छत्रछाया में रहने को तैयार नहीं. इस इनक़ार का मतलब है कि आदिवासी नक्सली हैं या नक्सलियों के असर में हैं और उनके मददगार हैं. उन्हें सबक सिखाने की ज़रूरत है.

सुविधाओं और कल्याणकारी योजनाओं से वंचित कर दिया जाए. बाक़ी काम सरकारी वर्दी और सलवा जुडुम की गैरसरकारी वर्दी करेगी. गांवों पर धावा बोला जाएगा. घरों और खेत-खलिहानों को आग के हवाले किया जाएगा. सलवा जुडुम के पराक्रमी आदिवासी औरतों और लड़कियों पर अपनी मर्दानगी का जौहर दिखाएंगे. उसे चुपचाप देखना और भोगना होगा. वरना बलात्कार के बाद स्तन भी काटे जा सकते हैं और गोली से उड़ाया भी जा सकता है.

दंतेवाड़ा ज़िले के पांच गांवों के आदिवासियों ने सलवा जुडुम का यह फरमान नहीं माना कि 'गांव छोड़ो और शरणार्थी की ज़िंदगी जियो', तो बदले में सलवा जुडुम के कोई दो सौ लोगों ने गांवों पर हमला बोला. जम कर लूटपाट और मारपीट की और आख़िर में 24 लोगों को गोली दागे जाने के लिए चुना. पांच खुशकिस्मत थे कि सामने खड़ी मौत को चकमा देकर भाग निकले. लेकिन बाक़ी 19 आदिवासियों की ज़िंदगी देखते-देखते हमेशा के लिए ख़त्म हो गई. 8 जनवरी 2009 को हुए इस हत्याकांड को नक्सलियों से मुठभेड़ का सरकारी नाम मिला. मरने वालों को ख़तरनाक नक्सली बताया गया. उनमें चार महिलाएं भी थीं, लेकिन उस दावे का झूठ परत-दर-परत खुलने लगा है और नक्सली सफाए के नाम पर आयोजित किये गये उस बर्बर कारनामे के विरोध में चौतरफा और दूर-दूर तक आवाज़ें भी उठने लगी हैं. फिलहाल, यह मामला बिलासपुर उच्च न्यायालय में है. यह कोई पहला मामला नहीं है. यह तो संतोषपुर की वारदात का दोहराव है, जिसमें खेतों में काम कर रहे 12 आदिवासियों को गोलियों का निशाना बनाया गया था.

फिलहाल, दंतेवाड़ा ज़िले में लगभग साढ़े छह सौ गांव वीरान हो चुके हैं. यह नक्सली हिंसा से आदिवासियों को बचाने की कवायद का नतीजा है. ज़्यादातर लोग अपनी जान बचा कर ज़िले से सटे आंध्रप्रदेश के जंगलों में भाग निकले. जो नहीं भाग सके, सलवा जुडुम के कैंपों में हैं. उन्हें डरा-धमका कर, हांक कर कैंपों में लाया गया है. उनमें से कुछ को सचमुच नक्सलियों से ख़तरा है. इसलिए कि नक्सली उन्हें अपना दुश्मन या सरकारी मुखबिर मानते हैं. सलवा जुडुम के कैंप किसी नरक से कम नहीं. आदिवासी कुदरत के क़रीब रहने और खुली हवा में सांस लेने के आदी हैं. लेकिन कैंपों में उन्हें ठूंस कर रखा जाता है और जहां मूलभूत सुविधाओं का भारी अकाल है. इसलिए तरह-तरह की बीमारियां हैं. त्रासदी यह कि घर का कोई सदस्य जंगल में है यानी सलवा जुडुम और एसपीओज़ की आंख की किरकिरी है, तो दूसरा कैंप में घुटने को मजबूर है. बंदूक का राज है. आज़ादी बंधक है. औरतें और लड़कियां और अधिक गुलाम हैसियत में हैं, और उनके यौन शोषण की भयावह कहानियां जब-तब बाहर आती रहती हैं. लेकिन सलवा जुडुम को सरकारी सहयोग और संरक्षण बदस्तूर जारी है.

हालांकि फरवरी में दिल्ली विश्वविद्यालय की नंदिनी सुंदर की याचिका पर, देश की सबसे बड़ी अदालत अपनी नाराज़गी जाहिर करते हुए राज्य सरकार को ताकीद कर चुकी है कि वह नक्सलियों से लड़ने के नाम पर आम नागरिकों को हथियार दिये जाने से बाज आए. उस पर राज्य सरकार ने अदालत को सफाई दी कि सलवा जुडुम का अब कोई वजूद नहीं है. लेकिन उसके कुछ ही दिन बाद डॉ रमन सिंह ने विधानसभा में फरमाया गया यह उनका अपना संकल्प हो कि सलवा जुडुम का अभियान तब तक जारी रहेगा, जब तक नक्सलियों का आतंक ख़त्म नहीं हो जाता. यह तो सलवा जुडुम के आतंक को वैधता प्रदान करने का बयान है कि सलवा जुडुम तीन दशक से जारी नक्सली हिंसा को ख़त्म करने के लिए आदिवासियों का स्वत:स्फूर्त आंदोलन है, तो उसे कैसे रोका जा सकता है? राज्य सरकार का मुखिया कहता है कि सरकार का सलवा जुडुम से कोई लेनादेना नहीं. वहीं उनका गृहमंत्री सरकार द्वारा एसपीओज़ को हथियार दिये जाने को उचित ठहराता है. नहीं भूला जाना चाहिए कि टाटा ने बस्तर में इस्पात संयंत्र के लिए राज्य सरकार से 4 जून 2005 को करार किया था, और उसके चौबीस घंटे के भीतर सलवा जुडुम की हलचल शुरू हो गई थी. उससे पहले नक्सली यह इरादा जाहिर कर चुके थे कि वे विस्थापन पर चुप नहीं बैठेंगे. सलवा जुडुम उसी चुनौती का जवाब है कि चाहे जो हो, विकास तो होकर रहेगा और विकास के लिए कंपनियों की सुरक्षा का पूरा बंदोबस्त किया जाएगा. मंशा सरकारी है, लेकिन चेहरा गैर सरकारी है और अंदाज़ क़ातिलाना और वहशियाना है. एसपीओज़ और सुरक्षा बलों पर साढ़े पांच सौ हत्याओं के, सौ से अधिक गांवों में आगजनी और लूट के, जबकि 99 बलात्कार के मामले दर्ज हैं. यह वे मामले हैं, जो किसी तरह दर्ज हो सके.

शुक्र है कि सलवा जुडुम दंतेवाड़ा ज़िले तक सीमित है, और जिसमें दंतेवाड़ा को बांट कर पिछले अगस्त में बनाया गया नया ज़िला बीजापुर भी शामिल है. आलम यह है कि दक्षिण बस्तर का यह इलाक़ा दो हिस्सों में है. एक हिस्से में सुरक्षा बल और सलवा जुडुम का सिक्का चलता है और दूसरे हिस्से में नक्सलियों का. दोनों तरफ

शिक्षा और स्वास्थ्य जैसी व्यवस्थाएं तहस-नहस हैं. बच्चों के अधिकारों की तो शामत है.

ख़बर है कि उड़ीसा सरकार भी छत्तीसगढ़ की तर्ज पर नक्सलियों को उखाड़ फेंकने के लिए दो हज़ार आदिवासी युवकों को एसपीओज़ का ओहदा दिये जाने की योजना बना रही है. राम जाने क्या होगा आगे?

आदियोग

feedback.chauthiduniya@gmail.com

सामाजिक कार्य का मर्म

देश के पिछड़े और गरीब इलाक़ों में सामाजिक विकास के लिए समर्पित ग़ैरसरकारी उर्फ नागर समाज संस्थाओं का जाल है. छत्तीसगढ़ में भी है. लेकिन वे केवल अपने काम से काम रखते हैं – परियोजना प्रस्ताव, प्रगति रिपोर्ट, बहीखाता, प्रशिक्षण वगैरह तक सिमटे रहते हैं. सशक्तीकरण का जाप करते हैं, लेकिन दमन के मामलों पर कन्नी काट जाते हैं. उनका काम विकास में जुटना है, किसी से पंगा लेना नहीं. बगल में आग उगी हो, तो उनसे क्या? आग बुझाने में कहीं हाथ झुलस गए तो?

लेकिन ऐसा भी नहीं कि आतंक के साये में सबकी बोलती बंद है. मसलन, दंतेवाड़ा में वनवासी चेतना आश्रम ने अन्याय और अत्याचार की आंधी में प्रतिरोध की आवाज़ बुलंद की. संगठन ने सलवा जुडुम के ख़ौफ़ से अपना गांव छोड़ कर भाग चुके आदिवासियों को वापस लाने की साहसिक मुहिम छेड़ी. उनकी सुरक्षा के लिए मानव ढाल के तौर पर कार्यकर्ताओं को तैयार किया. आदिवासियों में हिम्मत भरी और अभी उसी पखवारे लिंगागिरी गांव के तमाम वाशिंदे चार साल का निर्वासन भोग कर वापस लौटे. क़दम-क़दम पर सरकारी अड़ंगा था और सलवा जुडुम के हमले का भी ख़तरा था. लेकिन आखिरकार उस पहल की जीत हुई. उससे उत्साहित होकर बसगुडा गांव के लोगों ने भी जंगलों से वापसी की ठानी और तमाम सरकारी अगर-मगर के बावजूद उन्हें भी अरसे बाद पिछले 8 मार्च को लंबे निर्वासन से छुट्टी मिली. काश कि यह सिलसिला जैसे जंगल की आग बन जाए और सलवा जुडुम और एसपीओज़ के डर से खाली हो गए गांवों में ज़िंदगी वापस लौटे.

फिलहाल, चुप्पी टूट रही है. गुजरी 29 मार्च को दंतेवाड़ा के पुलिस अधीक्षक के सामने पांच आदिवासी औरतों ने अपनी आपबीती दर्ज की कि किस तरह उन्हें बलात्कार का शिकार बनाया गया. अरलमपलल्ली की माड़वी बुधरी को चार एसपीओज़ ने बंदूक की नोंक पर घर से उठाया और जंगल ले जा कर बलात्कार किया. सामसट्टी की मिड़ियाम हिड़मे के साथ उसके घर में ही पुलिस और एसपीओज़ के जत्थे ने सामूहिक बलात्कार किया. उसी गांव की मड़कम सीता, सोड़ी आयते और ऐमला सुकड़ी को भी एसपीओज़ का बलात्कार झेलना पड़ा. मिड़ियाम हिड़मे की सास बंदूकधारी दस्ते से डर कर भाग गयी और वह अकेली पड़ गयी. बाक़ी के घरवालों ने हमलावरों का विरोध किया और लहूलुहान हुए. अंधी बंदूक के आगे मिन्नतों की कब चलती है? बड़ी बात है कि पांचों औरतें सामने आईं और उन्होंने अपनी दुखभरी (और सभ्य समाज के लिए शर्मनाक भी) दास्तान बयां की. उनके साथ यह हादसा कोई तीन साल पहले अलग-अलग दिनों में हुआ था. तारीख और महीना उन्हें याद नहीं. लेकिन सभी ज़्यादातर बलात्कारियों को पहचानती हैं. अब तक वे चुप थीं और सदमे में थीं. कोई रास्ता भी नहीं सूझ रहा था. वनवासी चेतना आश्रम की पहल ने उनमें इंसाफ़ हासिल करने की चाहत पैदा की. उन्होंने जाना कि चुप रहना गुनहगारों की हिम्मत बढ़ाना है. इसे कहते हैं सामाजिक कार्य. वरना तो जो भी है, सामाजिक कार्य की दुकानदारी है, गरीब-गुरबों के अशक्तीकरण की उम्दा बाज़ीगरी है.

आ. यो.

एम जे अकबर

जब राजनीतिक दोस्त बन जाते हैं दुश्मन

इस आम चुनाव का पहला प्रारूप तो उभर कर सामने आ गया है. वह यह कि सचमुच का भीषण संघर्ष पारंपरिक दुश्मनों के बीच नहीं है, बल्कि कल के दोस्तों और आज के प्रतिद्वंद्वियों के बीच है. खासकर वहां, जहां उन्होंने सत्ता की साझेदारी की थी. उड़ीसा में भाजपा की धोखा खाने की अनुभूति प्रत्यक्ष है. अधिक निर्णयात्मक कहानी यूपीए में है, जहां बदलती हुई मानसिकता और प्रवृत्तियों ने एक विस्फोट की सी हालत पैदा कर दी है.

2004 में कांग्रेस के पास एकमात्र लक्ष्य था. वह लक्ष्य भाजपा को हराने का था. इस बार उसके लक्ष्य कुछ अलग हैं. वह दोगुना हो गया है. 2009 में कांग्रेस का समानांतर उद्देश्य अपने आधार को बढ़ाना है. अब यह विस्तार भाजपा की कीमत पर है, इसमें थोड़ा ही भ्रम है. इसके अलावा मायावती की बढ़ती पकड़ और मुलायम सिंह की लगाई सेंध से भी कांग्रेस को निबटना है. यूपीए के अंदर के विरोधाभास इस तथ्य में निहित हैं कि गंगा के इलाके और महाराष्ट्र में कांग्रेस का आधार उसके सहयोगियों ने ही कमज़ोर कर दिया है. कांग्रेस ने अपने इरादे तभी साफ कर दिए, जब उसने तय किया कि वह यूपीए गठबंधन के एक साझीदार की तरह नहीं लड़ेगी, बल्कि अपने उद्देश्य के तहत आंशिक समझौते ही करेगी. इसने अपने गठबंधन सहयोगियों की सूची में से प्रतिद्वंद्वियों की प्राथमिकता तय कर ली है. कांग्रेस के निशाने पर सबसे पहले वाम दल हैं, जिन्होंने अमेरिका की तरफ बढ़ती रणनीतिक पहलकदमी का विरोध किया था. कांग्रेस ने ममता बनर्जी के साथ एक अपमानजनक समझौता किया ताकि वाम के मुख्य गढ़ को दरका सके. व्यावहारिक मायनों में यह गठबंधन कांग्रेस को बहुत अधिक लाभ पहुंचानेवाला नहीं है. कांग्रेस अपनी पहले की छह सीटें तृणमूल के बिना भी बचा ले जातीं, लेकिन कांग्रेस का वोट तृणमूल को उसकी 2004 में जीती एक सीट से 10 या अधिक सीटें भी दिला सकती है.

हैरत की बात है कि कांग्रेस ने बिहार में इसी तरह के समझौते से इंकार कर भाजपा और एनडीए को जीवनदान दे दिया. लालू यादव और रामविलास पासवान ने कांग्रेस को उतनी ही सीटों का प्रस्ताव दिया, जितनी उसके पास हैं. कांग्रेस तीनों सीटें भी हार सकती हैं क्योंकि यह अकेले लड़ रही है. इसने बिहार में अपने उत्थान के लिए दोहरा ख़तरा मोल ले लिया है.

यही बात उत्तर प्रदेश में भी है. मुलायम तो लालू से भी अधिक उदार थे. कांग्रेस को नौ सीटें थीं और उसे 17 सीटों का प्रस्ताव दिया गया. मुलायम–कांग्रेस गठजोड़ ने निश्चित तौर पर मायावती पर दवाब डाला होता, भाजपा की संभावनाएं कम होतीं, और कांग्रेस यहां भी दो अंकों में पहुंच जाती. दोहरा ख़तरा फिर से. बसपा और भाजपा अब अपनी सीटें जरूर ही बढ़ा ले जाएंगी. झारखंड समझौते की विफलता से तो भाजपा को ही सफलता मिलेगी. क्या इन सबका कोई जवाब है.

कांग्रेस पवार के साथ इसलिए चिपकी रही क्योंकि यह अपने मुख्यमंत्री को आगामी विधानसभा चुनाव के पहले इस्तीफा नहीं दिलवाना चाहती थी. हालांकि शरद पवार भी योजना के व्यापक स्वरूप में त्याग ही दिए जाएंगे. वह दूसरे सबसे बड़े राज्य में कांग्रेस के विकास को रोके हुए हैं, ठीक उसी तरह जैसे मायावती और मुलायम ने सबसे बड़े राज्य में इसका दम घोंट दिया है. तमिलनाडु में करुणानिधि ने गठबंधन इसलिए स्वीकार कर लिया क्योंकि कुल 39 सीटों में कांग्रेस को 14 ही सीटें मिली हैं.

कांग्रेस की गणना यह है कि जब शिकवा–शिकायत का दौर खत्म हो जाएगा और सीटों की संख्या पर बात होगी, तो कीमत दिल्ली की सत्ता खोना नहीं होगा. कांग्रेस का यकीन है कि वह सबसे बड़े दल के रूप में उभरेगी और तब उन्हीं सहयोगियों को मनाने या धमकाने में सफल होगी, जिसका अभी उसे नुकसान हो गया है. यह स्थिति *भाजपा को किसी क़ीमत पर रोको* के अभियान से आएगी. पवार, यादव और राम विलास को राजनीतिज्ञ नहीं कह सकते अगर वे खुद ही इस दवाब के खतरे नहीं समझ पाते. उन्होंने भी दवाब की राजनीति से ही जवाब दिया. पवार ने चुनाव–पूर्व के दवाब को एक सवाल पूछकर कम कर दिया. वह सवाल यह था कि अगर कांग्रेस भाजपा को रोकने के लिए इतनी ही उत्सुक है,तो कांग्रेस तीसरे मोर्चे की सरकार को बाहर या अंदर से समर्थन क्यों नहीं देती और किसी भी गठबंधन में मुख्य स्थान क्यों चाहती है. 2004 में पवार और दूसरे औचक पकड़े गए थे. इस बार उन्होंने अपनी ही धुन पर नाच करना शुरू कर दिया है. पवार ने यह साफ कर दिया है कि वह खुद को भविष्य का एक बेहतर प्रधानमंत्री मानते हैं न कि डॉ.मनमोहन सिंह को या राहुल गांधी को.

प्रकाश करात के ऊपर कांग्रेस का कोई कर्ज़ नहीं है, वह तो खुद को ठगा गया महसूस करते हैं. वह इस बात को लेकर बिल्कुल स्पष्ट सोच रखते हैं कि वाम मोर्चा कांग्रेसनीत किसी भी सरकार का 2009 में समर्थन नहीं करेगा. अगर यूपीए भारतीय राजनीति का आधुनिक गठबंधन है, तो मार्क्सवादी मानते हैं कि वे उत्तर–आधुनिक हो गए हैं. क्षेत्रीय हितों की लड़ाई ने तीसरे मोर्चे में एक चौथा मोर्चा खोल दिया है, लेकिन ये सभी पार्टियां चुनाव के बाद खुद को फिर से स्थापित करेंगी. जहां लड़ाइयां दूर होने वाली नहीं हैं, सपा और बसपा जैसी पार्टियां अलग कैंप में रहेंगी, जो इस पर निर्भर करेगा कि कौन पहले कहां पहुंचता है. इसकी कल्पना नहीं की जा सकती कि आगे रहने वाली हरेक पार्टी ने एनडीए के लिए अपने दरवाज़े बंद कर लिए हैं. भारतीय राजनेता दोराहे की स्वतंत्रता पसंद करते हैं, और कुछ तो किसी भी तिराहे या चौराहे पर खड़ा रहना पसंद करते हैं. हालांकि सारी बातचीत 16 मई के बाद शुरू होगी. पेशेवर राजनेता जनमत सर्वेक्षण के लिए भुगतान करते हैं और उसको खारिज कर देते हैं, जो उनकी पसंद का नहीं. यह कई बार अपने मन की बात नहीं होने पर नकारने का स्वभाव हो सकता है. हालांकि वे यह भी जानते हैं कि सर्वेक्षण ही अंतिम सत्य नहीं हैं. एक जनमत सर्वेश्रण वही है जो यह कहता है–केवल एक सर्वेक्षण. मसला यह है कि अंत में केवल तथ्य ही मायने रखते हैं. तब तक, घुमाव–फिराव और उछाल को नज़रअंदाज कीजिए, बाक़ी चीज़ों का आनंद लीजिए, लेकिन वोट देने जरूर उठिए.

feedback.chauthiduniya@gmail.com

जब तोप मुकाबिल हो

क्यों हो रहा है पाकिस्तान में ये सब? कौन हैं जिम्मेवार. 30 मार्च को लाहौर में पुलिस ट्रेनिंग सेंटर में हुए आतंकवादी हमले के बाद हमने दुनिया के ज़्यादातर टेलीविजन चैनलों पर बैतुल्ला मसूद का इंटरव्यू देखा और सुना. बैतुल्ला मसूद इन दिनों दुनिया भर के मीडिया में ओसामा बिन लादेन से ज़्यादा अहमियत रखते हैं. बेनज़ीर भुट्टो की शहादत की योजना इन्हीं की बनाई हुई थी. पुलिस ट्रेनिंग सेंटर पर हमले की ज़िम्मेदारी भी इन्होंने ली और तीन अप्रैल को अमेरिका में एक सिरफिरे द्वारा 15 लोगों की हत्या के पीछे भी इन्होंने अपना हाथ बताया. लेकिन अपने इंटरव्यू में बैतुल्ला मसूद ने एक ख़ास बात की, जहां से आज की बात शुरू करते हैं.

अपने इंटरव्यू में बैतुल्ला मसूद ने कहा कि वे परमाणु बम का इस्तेमाल नहीं करेंगे, क्योंकि इससे बेक़सूरों की जान जाएगी और एक सच्चा मुसलमान बेक़सूरों को नहीं मारता. क्या पुलिस ट्रेनिंग सेंटर में ट्रेनिंग ले रहे जवानों का कसूर था कि वे देश की क़ानून व्यवस्था लागू करने वाली मशीनरी का हिस्सा बनना चाहते थे? मस्जिदों में होने वाले धमाकों में मरने वालों का क़सूर कोई बता सकता है? पांच अप्रैल को हुए धमाके में 50 लोग मरे. इनका भी कसूर हमें नहीं मालूम. पाकिस्तान में हर दूसरे दिन कहीं न कहीं धमाके होने लगे हैं और मरने वालों में सिर्फ बेक़सूर ही नहीं होते, मासूम बच्चे और औरतें भी होती हैं.

इन बेक़सूरों के साथ वह भी मर जाता है, जो इन्हें मारने का जिम्मेवार है. कौन–सी भावना है, जो उन्हें आत्मघाती हमला करने और मरने के लिए प्रेरित करती है, पता नहीं, पर जो उन्हें प्रेरित करते हैं, कम से कम उन्हें तो पता है कि वे जहां पर हमले का आदेश देते हैं, वहां बेक़सूर ही होते हैं, कसूरवार नहीं. तब क्यों ऐसे फ़ैसले होते हैं? क्या बेक़सूरों और मासूमों को मारना आसान टारगेट है? शायद हां. क्योंकि वे अपना बचाव नहीं कर सकते. उन्हें हमले से बचाव के तरीके नहीं आते, उनके पास हथियार नहीं होते, उन्हें बचाने वाले हथियार भी उनकी हिफाज़त नहीं करना चाहते.

जो भी ऐसे फ़ैसले लेते हैं, जिसकी वजह से बेक़सूर मारे जाते हैं, उनकी संवेदना शायद मर गई है. उनके दिल पत्थर के हो गए हैं. वे शायद ऐसी दुनिया का सपना देखते हैं, जिसमें रिश्ते होंगे ही नहीं, न कोई भाई होगा और न बहन, न मां न बाप. उस दुनिया में मां अपने बेटे का सही–सलामत घर लौटने का इंतज़ार नहीं करेगी, और न किसी धमाके में मरने पर आंसू बहाएगी. यह लड़ाई ग़ैर–बराबरी के ख़िलाफ़ नहीं है और न ही बेहतर ज़िंदगी के लिए है. किसके लिए लड़ाई हो रही है, पता नहीं. पहले हमें लगता था कि हिंदुओं के ख़िलाफ़ वे मुसलमान लड़ रहे हैं, जो हिंदुओं को इस्लाम की राह में रोड़ा समझते हैं, पर पाकिस्तान में होने वाले धमाकों में तो हिंदू नहीं मर रहे. मुसलमान ही मर रहे हैं. मस्जिदों में होने वाले धमाकों में मुसलमान ही मर रहे हैं, चाहे वे सुन्नी हों या शिया. जो भी मर रहे हैं, उनके नाम चाहे जो भी हों, हैं तो वे इंसान ही.

मेरे दिमाग़ से आठ साल पहले देखी एक फिल्म की याद धुंधली नहीं होती. एक पंद्रह साल का लड़का खाना खा रहा है. ग़रीब घर है. दीवारों पर कुछ फोटो लगे हैं. थोड़ी देर में वह लड़का अपने शरीर पर बम बांध रहा है. बम बांधने के बाद जब वह जैकेट पहन चुका होता है, तो कैमरामैन सवाल पूछता है कि अब वह क्या करेगा, तो वह 15 साल का लड़का कहता है कि मैं उस बस से जाकर टकरा जाऊंगा और सभी को मार दूंगा. कैमरामैन पूछता है कि बस से क्यों, तब वह लड़का कहता है कि उस बस में इज़रायली सिपाही जाते हैं. थोड़ी देर में यह बस भर जाएगी, तब मैं उन्हें मार दूंगा. मारने के बाद मेरा भी नाम शहीदों में लिया जाएगा. दरअसल, दीवार पर लगी तस्वीरें ऐसे ही शहीदों की है, जिन्होंने हमला किया और शहीदों में शामिल हो गए. कैमरामैन बस की तरफ कैमरा कर लेता है. थोड़ी देर में वह बस आदमी और औरतों से भर जाती है. लड़का कैमरामैन से कहता है कि मेरे मरने पर काफी पैसा मेरे मां–बाप को मिलेगा, जिससे मेरी बहनों की परवरिश हो जाएगी. कैमरामैन पूछता है कि क्या गारंटी है कि पैसा मिल ही जाएगा? लड़का इस पर कहता है कि जो पहले शहीद हुए, उनके घरवालों को तो मिला, तो मेरे घर वालों को भी मिल जाएगा. लड़का घर से निकला, कैमरा उसे दिखा रहा है. लड़का बस की तरफ बढ़ता है पर तभी कैमरामैन कहता है कि बस में तो बूढ़े और औरते हैं, सिपाही नहीं. इस पर लड़का कहता है कि क्या फर्क पड़ता है, कभी–कभी इस बस में सिपाही भी आ जाते हैं. कैमरामैन लड़के पर ही कैमरा फोकस किए रहता है. लड़का धीरे–धीरे बस की ओर बढ़ता है, दौड़ कर बस पर चढ़ने की कोशिश करता है. अचानक धमाका होता है, बस उड़ जाती है और ख़त्म हो जाता है वह 15 साल का लड़का और उसके साथ ही बूढ़े तथा औरतें.

> अगर हज़रत मोहम्मद ने बच्चों और औरतों पर हमले को इंसानियत के ख़िलाफ़ कहा है, अगर कुरान शरीफ़ बेक़सूरों को मारने की अनुमति नहीं देता, तो जो यह काम करते हैं, क्या वे अपने को हज़रत मोहम्मद और कुरान शरीफ़ से भी ऊपर समझते हैं? क्यों नहीं दुनिया भर के मुस्लिम विद्धान मिल कर इसे इंसानियत के ख़िलाफ़ अपराध घोषित करते हैं?

यह फिल्म कल्पना नहीं है. दुनिया के एक मशहूर चैनल ने इस आत्मघाती हमले की सच्ची रिकॉर्डिंग की थी. सवाल है कि वह बच्चा शहीद होने के जज़्बे से गया या फिर परिवार की ग़रीबी दूर करने के लिए उसने अपनी जान दी, अलग–अलग ढंग से लोग अपनी राय बना सकते हैं, लेकिन जो बूढ़े और औरतें मरीं, उसके पक्ष में किसके पास तर्क हैं. तब क्या ये घुन हैं, जो गेहूं के साथ पिसते हैं. क्या बेक़सूरों का मरना, किसी ताक़तवर के मन की शांति के लिए ज़रूरी है.

इसी सवाल पर मुस्लिम विद्वानों को सोचना है. अगर हज़रत मोहम्मद ने बच्चों और औरतों पर हमले को इंसानियत के ख़िलाफ़ कहा है, अगर कुरान शरीफ़ बेक़सूरों को मारने की अनुमति नहीं देता, तो जो यह काम करते हैं, क्या वे अपने को हज़रत मोहम्मद और कुरान शरीफ़ से भी ऊपर समझते हैं? क्यों नहीं दुनिया भर के मुस्लिम विद्वान मिल कर इसे इंसानियत के ख़िलाफ़ अपराध घोषित करते हैं.

पाकिस्तान के साथ हमारी हमदर्दी है. हो सकता है कल कोई लिखे कि हिंदुस्तान के साथ हमारी हमदर्दी है. हम भी धीरे–धीरे ऐसे ही मनोविज्ञान के शिकार होते जा रहे हैं. जब हम रोजी–रोटी, विकास और इंसानियत के रास्ते से हटते हैं तो हम धर्म भी भूल जाते हैं और धर्म का नाम लेकर अधर्म के रास्ते पर चल पड़ते हैं. खोटे सिक्के को चलाने के लिए खरे सिक्के का सहारा लेना पड़ता है, वैसे ही अधर्म को चलाने के लिए धर्म का नाम लेना पड़ता है.

यह अजीब बात है कि जब से धार्मिक चैनलों की बाढ़ आई है, जिसमें हिंदू, मुस्लिम, ईसाई और सिख धर्म के चैनल शामिल हैं, तब से अपराधों की बाढ़ तो आई ही है, धार्मिक कट्टरता, जो कि अधार्मिकता में कब बदल जाती है, पता ही नहीं चलता, भी बहुत बढ़ी है. जैसे–जैसे धर्म के बारे में उपदेश देने वाले बढ़ रहे हैं, वैसे–वैसे धार्मिक झड़प के मामले भी बढ़े हैं. क्या हम पहले अच्छे थे, या अब ज़्यादा ख़राब होते जा रहे हैं.

पाकिस्तान की सरकार को अपने को पुनर्गठित करना चाहिए, ताकि वह अपने नागरिकों की जान–माल की रक्षा कर सके. हमारे यहां भी जान–माल की रक्षा के लिए सरकार को सचेत होने की ज़रूरत है. पर सब से ज्यादा बेक़सूरों को बचाने के लिए आत्मा को जगाने की ज़रूरत है.धर्म को लेकर भी लोगों के दिमाग़ में सवाल उठते हैं. जैस–जैसे समय बदलता है, समाज भी बदलता है. समाज के बदलने के साथ धर्म का प्रारूप भी बदलता है, भाषा और भाष्य भी बदलता है. जो धर्म अपने दरवाज़े दूसरों के लिए खोलने में आनाकानी नहीं करता, वह फैलता है और जो अपने को संकुचित रखता है, वह सिमटता जाता है. जब मानव सभ्यता शुरू हुई थी, तब और उसके बाद बदलती सदियों में धर्म का स्वरूप और उसका भाष्य जैसा था, आज उसके भाष्य में परिवर्तन तो आया ही है. सारी दुनिया के धर्मों में बहस चल रही है कि पुरानी शुरुआती व्याख्या मानी जाए, या व्याख्या को आज की रोशनी में बदला जाए. हालांकि मानवीयता या अमानवीयता की परिभाषा में कोई बहस नहीं है. अभी कुछ दिन पहले टीवी पर एक क्लिपिंग चली, जिसमें एक औरत को कोड़े मारते और उसे पकड़े तीन लोग दिखाई दिए. कहा गया कि उसे शरीयत के आधार पर सजा दी गई. इसे पाकिस्तान के स्वात का वाकया बताया गया. मेरे मुस्लिम दोस्तों और उनकी पत्नियों ने बताया कि शरीयत में नहीं लिखा है कि औरत को सरेआम कोड़े लगाने चाहिए. उस औरत की नंगी पीठ भी फिल्म में दिखाई गई है, क्या एक औरत की नंगी पीठ के साथ उसके बदन के और हिस्से भी वहीं नहीं दिखाई दिए होंगे. औरत को नंगा देखना किसी भी धर्म में सही नहीं माना गया है, इस्लाम में तो बिल्कुल नहीं. स्वात घाटी में तालिबानी कानून चल रहा है, जिसे वे शरीयत का कानून बता रहे हैं. हमारा मुस्लिम विद्वानों से अनुरोध है कि वे हमे बताएं कि क्या यह सही है.

संपादक

feedback.chauthiduniya@gmail.com

रवि किशोर

अपील ही काफी नहीं अयोग्यता से बचने के लिए

माननीय मुख्य न्यायाधीश की अध्यक्षता वाले सुप्रीम कोर्ट बेंच ने 31 मार्च को संजय दत्त के अभियोग और सज़ा (जो विशेष न्यायाधीश ने दी थी) को स्थगित करने से इनक़ार कर दिया. इसका मतलब यह हुआ कि आगामी लोकसभा चुनाव में लड़ने की मुन्नाभाई की हसरत पूरी नहीं हो सकती. इस फ़ैसले ने न्यायपालिका में आम लोगों की आस्था फिर से बहाल की है और इस तथ्य को भी बहाल किया है कि अभियुक्त को चुनाव लड़ने और संसद या राज्य विधानसभा का माननीय सदस्य बनने का अधिकार नहीं देना चाहिए. हालांकि हमारे देश के क़ानून बनानेवाले अपने राजनीतिक दलों की मार्फत इसको नकारते भी नज़र आते हैं और अभियुक्तों की उम्मीदवारी की वकालत कर इसको दर्शाते भी हैं. यह सभी राजनीतिक दलों के लिए एक समान लागू होता है. उस आदर्श स्थिति की तो बात ही रहने दें, जहां आपराधिक पृष्ठभूमि और संदिग्ध चरित्र वाले लोगों को चुनाव लड़ने से रोक दिया जाए, लेकिन राजनीतिक पार्टियां कम से कम इतना तो कर ही सकती हैं कि जिन पर आपराधिक मामले साबित हो चुके हैं, उन्हें टिकट ही न दें. यह तो न्यूनतम है, जो हम लोग राजनीतिक दलों से उम्मीद कर सकते हैं. खासकर मान्यताप्राप्त दलों से. ये पूरा एपिसोड लोगों के बीच यही धारणा छोड़ता है कि राजनीतिक दल न केवल अपराधियों को पालते हैं, बल्कि सच पूछिए तो उनको बढ़ावा देते हैं.

रिप्रजेंटेशन ऑफ पीपल एक्ट, 1951 का सेक्शन 8 (3) साफ तौर पर कहता है कि किसी भी अपराध में अभियुक्त बना कोई भी व्यक्ति या क़ैद की सज़ा पाए (दो साल से अधिक का, सब सेक्शन 1 और सब सेक्शन 2 के अपराधों के अलावा) आदमी को इस अभियोग की तिथि से ही अयोग्य घोषित कर देना चाहिए और उसकी रिहाई के अगले छह सालों तक अयोग्य ही घोषित कर देना चाहिए.

कुछ राजनीतिक दल अपनी रुचि के मुताबिक जान–बूझ कर संदेह पैदा करते और इस बात की व्याख्या भी करते हैं कि अभियोग का मतलब क्या होता है और अगर कोई अपील लंबित है, तो अभियुक्त के ख़िलाफ़ क़ानूनी बाधाओं को दूर करने के लिए यही पर्याप्त होना चाहिए, जो रिप्रजेंटेशन ऑफ पब्लिक एक्ट के सेक्शन 8 (3) में है. हालांकि क़ानून काफी पुख्ता है और माननीय उच्चतम न्यायालय के संवैधानिक बेंच ने 2005 में इसको स्थापित किया था. के प्रभाकरन बनाम पी जयराजन के मामले में सुप्रीम कोर्ट ने साफ तौर पर कहा था कि नामांकन का दिन अहम होता है और इस दिन को लक्ष्य करके अभियोग के ख़िलाफ़ अपील अतार्किक और असामयिक है. हालांकि सज़ा पाया मुजरिम भी अपनी सज़ा को स्थगित करनेवाला आदेश सीआरपीसी की धारा 389 के तहत पा सकता है. लेकिन सिर्फ इस स्थगन के आधार पर ही कोई चुनाव लड़ने के योग्य नहीं हो सकता. यह स्थगन आदेश तो केवल सज़ा का है, न कि फ़ैसले को पलट दिया गया है.

सेक्शन 8(3) के तहत अयोग्यता सज़ा निर्धारित होने के दिन से ही शुरू हो जाती है, भले ही वह आदमी हिरासत में लिया गया हो या नहीं. कोई भी चुनाव के अयोग्य होने से इसी आधार पर नहीं बच सकता कि वह हिरासत में नहीं लिया गया या उसको ज़मानत मिल गई. एक बार वह अगर हिरासत में चला गया, तो वह अपनी क़ैद की अवधि तक लगातार अयोग्य ही रहेगा. और अपनी रिहाई के अगले छह सालों तक चुनाव लड़ने लायक नहीं रहेगा.

सुप्रीम कोर्ट की व्यवस्था है कि रिप्रजेंटेशन ऑफ पीपल एक्ट की धारा 8 का दायरा बढ़ाने के पीछे संसद की मंशा यही है कि सार्वजनिक जीवन में पवित्रता और स्वच्छता कायम हो. जो कानून तोड़ते हैं, उन्हें कानून बनाना नहीं चाहिए.

हालांकि नवजोत सिंह सिद्धू बनाम स्टेट ऑफ पंजाब के मामले में सुप्रीम कोर्ट ने 2007 में व्यवस्था दी कि सीआरपीसी की धारा 389(1) कोर्ट को न केवल सज़ा को स्थगित करने का और ज़मानत देने का अधिकार देती है, बल्कि उस प्रक्रिया को भी स्थगित करने का अधिकार देती है, जिसके ख़िलाफ़ अपील की गई है. यानी सज़ा. अपील स्वीकार करनेवाला कोर्ट आदेश के स्थगन को स्टे ऑफ ऑर्डर दे सकता है, या रद्द कर सकता है. सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि सज़ा पर रोक तभी लगाई जा सकती है, जब मामला बेहद अलग हो. नवजोत सिंह सिद्धू के मामले में सुप्रीम कोर्ट ने अभियोग के साथ ही सज़ा पर भी स्थगन दे दिया. आगे सुप्रीम कोर्ट ने सज़ा की कार्रवाई भी अपील के फ़ैसले तक रोक दी.

इसलिए यह साफ तौर पर समझना होगा कि नवजोत सिंह सिद्धू के मामले में सुप्रीम कोर्ट ने न केवल अभियोग को ही स्थगित किया बल्कि उसकी कार्रवाई पर भी अपील के फ़ैसले तक रोक लगा दी. सज़ा की कार्रवाई पर स्थगन ने सिद्धू के चुनाव लड़ने का रास्ता साफ़ कर दिया और रिप्रजेंटेशन ऑफ पीपल एक्ट की धारा 8(3) की प्रक्रिया का उल्लंघन भी नहीं हुआ.

संजय दत्त के मामले में सुप्रीम कोर्ट ने यह नहीं पाया कि अभियोग और सज़ा को स्थगित किया जा सके, तो इसी वजह से सेक्शन 8 (3) की छूट दत्त के मामले में लागू नहीं होगी. सुप्रीम कोर्ट ने आगे यह भी कहा कि सीआरपीसी की धारा 389 के अधिकार का कुछ खास स्थितियों में ही प्रयोग होना चाहिए. हालांकि एक विरोधाभासी स्थिति तब पैदा होती है, जब संसद या राज्य विधानसभा का कोई सदस्य निर्वाचित होने के बाद सज़ा पाता है. रिप्रजेंटेशन ऑफ पीपल एक्ट का सेक्शन 8(4) यह व्यवस्था देता है कि कोई भी निर्वाचित सदस्य अयोग्य साबित नहीं होगा अगर उसने अपील की है, और कोर्ट ने उसकी अपील को मंजूर कर लिया है. इसी वजह से कोई भी सदस्य महज एक अपील दायर कर ही बच सकता है, जब तक अपील का फ़ैसला न आ जाए.

इसके उलट चुनाव लड़ने के मामले में ऐसी कोई राहत उपलब्ध नहीं है अगर केवल अपील ही की गई है, तो. चुनावी परिदृश्य में योग्य साबित होने के लिए ज़रूरी है कि सज़ा और उसकी प्रक्रिया स्थगित हो जाए. अयोग्यता से बचने का रास्ता केवल वर्तमान सदस्यों के पास है और इसका फायदा तभी तक है, जब तक सदन चलता रहे और वह व्यक्ति सदन का सदस्य हो. बचाव उस हालत में नहीं हो सकता है, अगर सदन भंग हो जाए या वह व्यक्ति सदन का सदस्य न रह जाए.

feedback.chauthiduniya@gmail.com

प्रिय संपादक जी,

चौथी दुनिया के दोबारा बाज़ार में आ जाने से मुझे बहुत प्रसन्नता हुई. एक ओर जहां अख़बारों में आज के समाचार के नाम पर नमक–मिर्च लगा कर ख़बरें पेश की जाती हैं, वहीं आपका अख़बार सही तथ्यों और पूरी जानकारी के साथ ख़बरों को छापता है. यह देख कर तो और भी अच्छा लगता है कि आपने आज भी अपने अख़बार के स्तर को पहले की तरह बनाए रखा है.

इसे पढ़ कर एक बार फिर वही अस्सी का ज़माना याद आ गया. मेरी तरफ से आपको हार्दिक शुभकामनाएं.

भावना
दिल्ली

प्रिय संपादक जी,

पिछले अंक में प्रकाशित सारे लेख बेहद अच्छे थे. *हमारे समाज और राजनीति का नंगा* नाच लेख खासतौर से बेहद पंसद आया. नेताओं की वोट बटोरने की करतूतों को काफी प्रभावशाली शब्दो में संजोया गया है.

चौथी दुनिया का हर लेख ज़िम्मेदार पत्रकारिता का उदाहरण पेश कर रहा है, पढ़ कर खुशी हुई. मेरी शुभकामना है कि जल्द ही यह देश का सर्वाधिक पढ़े जाने वाले अख़बार के तौर पर अवश्य ही उभर कर आएगा.

मीनू बहुगुणा
भोपाल

प्रिय संपादक जी,

सबसे पहले मेरी तरफ से आपको *चौथी दुनिया* फिर से छापने के लिए बहुत बहुत बधाई. यूं तो इस अख़बार के सारे लेख ही बहुत अच्छे होते हैं, पर बाज़ार में आए नए उपकरणों वाला पृख विशेष रूप से उल्लेखनीय है. यह बच्चों के लिए काफी ज्ञानवर्धक है. कृपया इस पृखपर आगे भी ऐसे उपकरणों पर जानकारी देते रहें.

मोहिंदर सिंह
बरेली

डॉ मनीष कुमार

विचारकों से दूर रहना

चुनाव का वक्त है, इसलिए यह सवाल मन में उठता है कि हमारे नेता कैसे हों. देश की जनता कैसे लोगों को सांसद बना कर भेजे. किन लोगों के हाथों में देश सुरक्षित रहेगा और कौन–सा नेता देश में प्रजातंत्र को मज़बूती देगा. हमारे सामने अलग–अलग किस्म के नेता हैं. कुछ पढ़े–लिखे विचारक हैं, कुछ कम पढ़े–लिखे लेकिन ज़मीन से जुड़े नेता, कुछ को विरासत में नेतागीरी मिली है, जो अपने उपनाम की राजनीतिक फसल काटते हैं, तो कुछ ऐसे भी हैं जो नेता तो हैं लेकिन चुनाव नहीं लड़ते, जिन्हें मालूम है कि वे जनता का आशीर्वाद नहीं पा सकेंगे.

राजनीतिक दर्शन की विश्वविख्यात शख्सियत शुम्पीटर ने प्रजातंत्र को नेताओं के बीच वोट लेने वाली प्रतियोगिता बताया. लेकिन उनकी थ्योरी दुनिया के सबसे बड़ी जम्हूरियत पर लागू नहीं होती. भारत में पिछले कुछ दिनों से ऐसे नेता उभर रहे हैं, जो चुनाव नहीं लड़ते, लेकिन देश की बड़ी–बड़ी पार्टियों को अपनी उंगली पर नचाते हैं. ये पढ़े–लिखे हैं. इनके पास बड़ी–बड़ी डिग्रियां हैं. कोई वकील है, तो कोई डॉक्टर या इंजीनियर. ये अपने–अपने राजनीतिक दलों के रणनीतिकार और विचारक हैं. ये नेता ही राजनीतिक दलों के एजेंडों को तय करते हैं. मुद्दों पर पार्टी की सोच क्या हो, ये भी तय करते हैं. ये अपनी–अपनी पार्टियों के बड़े–बड़े पदों पर विराजमान हैं. ये पार्टी के प्रवक्ता बनते हैं. ये पिछले दरवाज़े से राज्यसभा भी पहुंचते हैं. और अगर इनकी पार्टी सरकार में आ जाती है, तो बिना चुनाव लड़े मंत्री पद का भी सुख भोगते हैं. कुल मिलाकर इन पढ़े–लिखे विचारक नेताओं के बारे में कहा जा सकता है कि ये बिना किसी ज़िम्मेदारी के, बिना जनता के प्रति किसी जवाबदेही के राजनीति के हर फ़ायदे, हर पद और हर सुख का विलास करते हैं. इनकी एक और खासियत है – ये पार्टी के अंदर ज़मीन से जुड़े नेताओं की जड़ खोदते हैं. ऐसे नेता प्रजातंत्र के लिए ख़तरनाक हैं. इस किस्म के नेता बीजेपी में हैं, कांग्रेस पार्टी में हैं और लेफ्ट पार्टियों में हैं.

> भारत में पिछले कुछ दिनों से ऐसे नेता उभर रहे हैं, जो चुनाव नहीं लड़ते, लेकिन देश की बड़ी–बड़ी पार्टियों को अपनी उंगली पर नचाते हैं. ये पढ़े–लिखे विचारक नेता हैं, जो बिना जनता के प्रति किसी जवाबदेही के राजनीति के हर फ़ायदे, हर पद और हर सुख का विलास करते हैं. इनकी एक और खासियत है – ये पार्टी के अंदर ज़मीन से जुड़े नेताओं की जड़ खोदते हैं. बीजेपी के अरुण जेटली इस श्रेणी के सबसे बड़े नेता हैं.

बीजेपी के अरुण जेटली इस श्रेणी के सबसे बड़े नेता हैं. बीजेपी में विचारक किस्म के नेताओं की पार्टी पर इतनी पकड़ है कि उमा भारती, गोविंदाचार्य, कल्याण सिंह, बाबूलाल मरांडी जैसे कई ज़मीन से जुड़े और भीड़ खींचने वाले नेता बौने साबित हो गए. उन्हें पार्टी छोड़नी पड़ी. अरुण जेटली की हैसियत तो ऐसी हो चुकी है कि आडवाणी और संघ के नुमाइंदे भी इनके सामने झुक जाते हैं. कांग्रेस में ऐसे नेताओं की भरमार है, लेकिन बीजेपी और कांग्रेस में बुनियादी फर्क है. कांग्रेस वंशवाद पर चलता है. पार्टी के नेताओं की हद दस जनपथ पर पहुंचते ही विलीन हो जाती है. गांधी परिवार का फ़ैसला अंतिम और सर्वमान्य होता है. लेकिन ये बात भी सही है कि सोनिया गांधी के नज़दीक लगभग सभी नेता विचारकों और रणनीतिकारों की श्रेणी में आते हैं. प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह भी विचारक हैं, जनता के नेता नहीं. देश में दूसरे किस्म के नेता वो हैं, जिनके पास विचारकों जैसी बड़ी–बड़ी डिग्रियां नहीं हैं. लेकिन ये ज़मीन से जुड़े नेता हैं. ये किसी उपनाम की वजह से राजनीति में नहीं हैं. इन्होंने अपनी लड़ाई खुद लड़ी और जनता का विश्वास जीतने में क़ामयाब रहे. ये अपने–अपने राज्यों में काफी लोकप्रिय हैं. ये जहां जाते हैं, भीड़ जमा हो जाती है. ज़मीन से जुड़े नेताओं की देश में कमी नहीं है. इनमें वो लोग आते हैं, जो आंदोलन से निकले हुए नेता है. जो छात्र राजनीति से आए हैं. जो किसान और मज़दूर आंदोलन से अपनी साख बनाने में क़ामयाब रहे. ये नेता वो हैं, जो हर बार चुनाव लड़ते हैं. ऐसे नेताओं में लालू यादव, मायावती, मुलायम सिंह, नीतीश कुमार, शरद पवार, ममता बनर्जी, डी राजा और गुरुदास दासगुप्ता का नाम है. ये लोग उस श्रेणी के नेता हैं, जो जनता के दुख–दर्द समझते हैं. उनकी समस्याओं को जानते हैं और उनसे जुड़े मुद्दे पर सहानुभूति रखते हैं. ये बात और है कि भारतीय राजनीति के चक्रव्यूह ने इन्हें थोड़ा कठोर बना दिया है. ये चाहते हुए भी जनता की समस्याओं का समाधान करने में असफल रहे हैं.

भारतीय राजनीति में परिवारवाद या वंशवाद एक सत्य है. ज़्यादातर राजनीतिक दलों को कोई परिवार चलाता है. उसके कार्यकर्ता किसी विचारधारा से नहीं, उस परिवार को ही अपना इष्ट मान कर अपना जीवन लगा देते हैं, उस परिवार के लिए काम करते हैं और कभी–कभी कुर्बानियां भी देते हैं. अफ़सोस की बात ये है कि आंदोलन और संघर्ष से उभरे नेताओं ने जो पार्टी बनाई, उसमें भी वंशवाद का ज़हर घुल गया है. ये भारतीय राजनीति के लिए सबसे ख़तरनाक संकेत है. राजनीतिक दलों में जनता से जुड़े नेताओं को प्रोत्साहन नहीं मिल रहा है. जो लोग ज़मीन पर काम करते हैं, उन्हें पार्टियों में उच्च पदों के लायक नहीं समझा जाता है. यही वजह है कि चुनाव दर चुनाव जनता के चहेते नेता गायब हो रहे हैं.

भारत में प्रजातंत्र राजनीतिक दलों का क़ैदी बन चुका है. चुनाव में जनता के नुमाइंदों की जगह पार्टी अपनी मर्जी के उम्मीदवार थोप देती है. जनता के पास अपनी पसंद के नेताओं को चुनने का कोई तरीक़ा नहीं है. इसलिए कई लोग ये मांग कर रहे हैं कि जनता के पास चुनाव के दौरान निगेटिव वोटिंग करने और चुनाव के बाद चुने हुए प्रतिनिधियों को हटाने का अधिकार होना चाहिए.

अगर इन नेताओं के बीच चुनाव की बात हो, तो प्रजातंत्र के लिए वे नेता ज़्यादा बेहतर हैं, जो ज़मीन से जुड़े हैं, जो आंदोलनों और संघर्ष से उभरे हैं. वो नेता जो कम पढ़े–लिखे या अनपढ़ होने के बावजूद जनता के दुख–दर्द को समझते हैं. किसानों और मज़दूरों की मजबूरियां जानते हैं. ये लोग पढ़े–लिखे विचारकों की श्रेणी वाले नेताओं से काफी बेहतर हैं, क्योंकि ये जनता प्रति जबावदेह हैं. पढ़े–लिखे विचारक को राजनीति एक खेल लगता है, जिसका एकमात्र मक़सद अपनी पार्टियों को जिताना है. उनकी यही विशेषता है कि वो अपनी पार्टी को चुनाव में जिताने के लिए किसी हद तक जा सकते हैं.

सरकार बनाने के लिए ये नेता ही सांसदों की ख़रीद–फरोख्त करते हैं, ब्लैकमेलिंग करते हैं. इनकी जवाबदेही जनता प्रति नहीं पार्टी के प्रति होती है. इन्हें जनता के पास वोट मांगने नहीं जाना होता है. इनकी दूसरी ख़ासियत ये है कि इनके पास हर अच्छे–बुरे काम का जवाब होता है. ये विचारक हैं, लेकिन देश में प्रजातंत्र मज़बूत हो या न हो, इसकी चिंता उन्हें नहीं होती, क्योंकि प्रजातंत्र को मज़बूत करने की डिग्री दुनिया के किसी भी विश्वविद्यालय में नहीं मिलती.

फोटो–प्रभात पाण्डेय

feedback.chauthiduniya@gmail.com

चौथी दुनिया
हिंदी का पहला साप्ताहिक अखबार

हम चाहते हैं कि आप अपने क्षेत्र के जागरूक संवाददाता बनें. आप अपने आसपास घट रही घटनाओं, जिनका संबंध, महिलाओं, बच्चों, किसानों, दलितों, अल्पसंख्यकों की समस्याओं उनके संघर्ष, उनपर होने वाले अत्याचार से हो, या आप अपने आसपास राजनीति, पुलिस और बाहुबलियों से जुड़ी घटनाओं पर रिपोर्ट भेजना चाहें, तो हम उनका स्वागत करेंगे. संपादकीय विभाग द्वारा चुनी गई प्रथम रिपोर्ट को तीन हजार रुपए का पुरस्कार दिया जाएगा. कृपया रिपोर्ट अपनी तस्वीर के साथ भेजें. अगर आप रिपोर्ट मेल करना चाहें, तो रिपोर्ट story.chauthiduniya@gmail.com *पर भेज सकते हैं.*

चुनाव से ग़ायब हैं मुद्दे

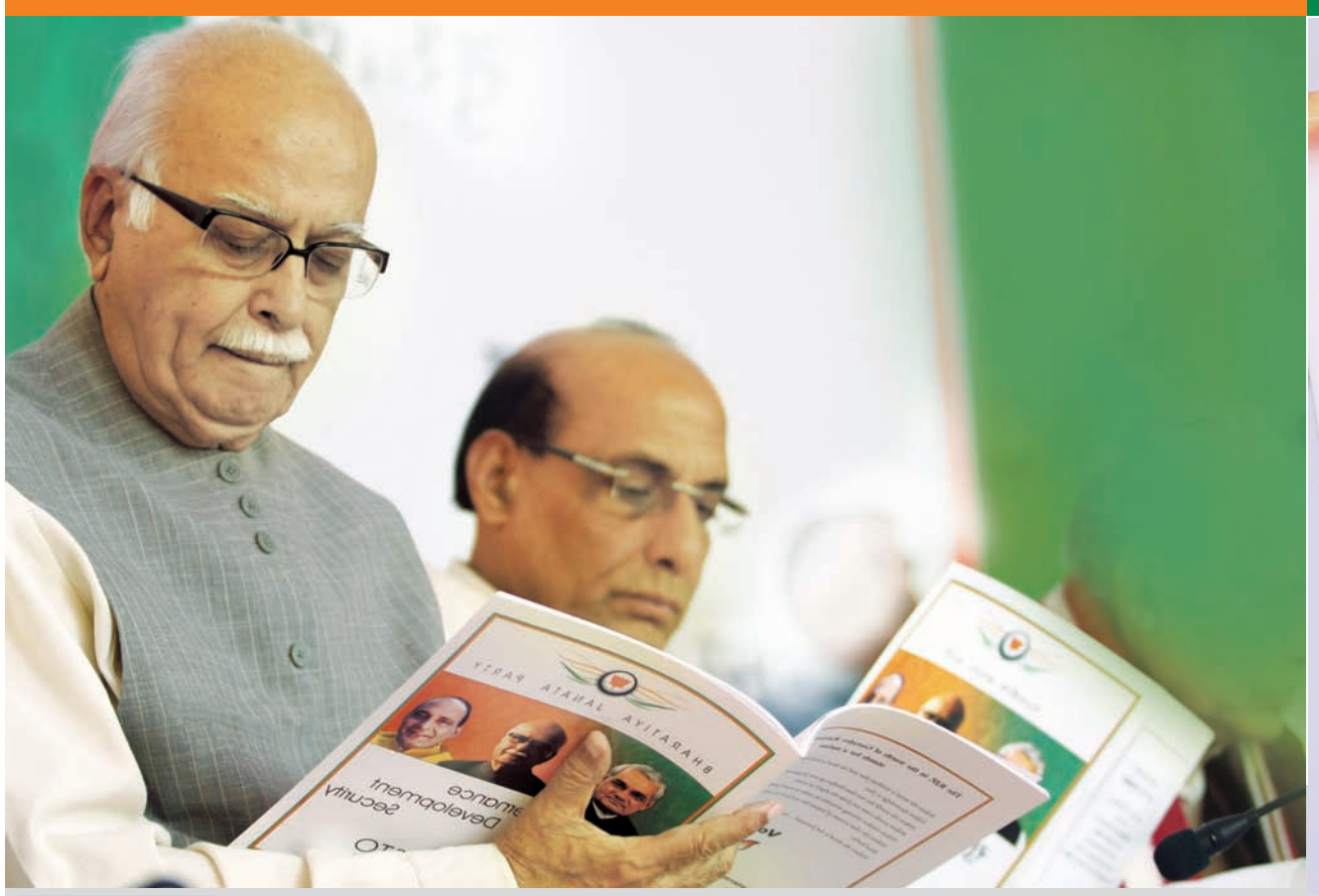

रूबी अरुण

आम आदमी एक बार फिर वोट देगा. उसका वोट उन नारों को मिलेगा, जिनमें उसकी खुशहाली के वादे छुपे होंगे. फिलहाल उसके सामने एक बड़ा असमंजस है. देश को चमकाने और धर्म की ध्वजा फहराने जैसे शोर के बीच न तो उसे पानी की कलकल सुनाई पड़ रही है, न ही पूरी रोटी का दिलासा मिल रहा है. हारी-बीमारी में अस्पताल के टूटे बेड के आसपास अभी भी उसे झोला छाप डॉक्टर मंडराते हुए दिख रहे हैं. बाढ़ आती है, आम आदमी को बहा कर ले जाती है. सूखा उसकी झुर्रियों से झांकता है. लेकिन देश की तक़दीर बनाने की बात करने वाले दलों को ये नज़ारा पुराना लगता है. उनके लिए आम आदमी के सुकून से ज़्यादा बड़ा मुद्दा आतंकवाद है. उनके घोषणापत्र में जिन वादों का ज़िक्र है, चुनावी भाषणों में उसकी छौंक तक नज़र नहीं आती. वे घोषणा पत्र कहते हैं विकास, लेकिन ये विकास वे आज़ादी के बाद से रट रहे हैं. बुनियादी मसले आज भी राजनीतिक पार्टियों के एजेंडे में नहीं हैं. पानी, हवा, खेती-किसानी, स्वास्थ्य मौजूदा आम चुनाव में कोई मुद्दा नहीं है. किसी भी दल की प्राथमिकता सूची में ये नहीं है. बिहार में बाढ़, पूरे देश में एसईजेड, वोट के बदले नोट, सवाल पूछने के बदले धन, एमपीलैंड कांड का ग़लत इस्तेमाल तक इस चुनाव में मुद्दे नहीं हैं.

अर्थ-अनर्थ

आर्थिक मुद्दों को जितनी तरजीह मिलनी चाहिए, उतनी नहीं मिल रही. हालांकि राग तो सभी आर्थिक मंदी का ही आलाप रहे हैं. राजनीतिक दलों को अब चिंता महंगाई की नहीं बल्कि मंदी की सता रही है. राजकोषीय घाटे का बोझ बढ़ रहा है, लेकिन यह भी मुद्दा नहीं है. विभिन्न क्षेत्रों में सुधार संबंधी विधेयकों से भी सियासी पार्टियां नज़रें चुरा रही हैं. ज़रूरत इस बात की है कि अर्थव्यवस्था का ऐसा खाका तैयार किया जाए, जिसका ज़ोर तो विकास पर हो, लेकिन जिसकी बुनियाद में ग़रीबी उन्मूलन, रोज़गार का सृजन, समाज के हर तबक़े और हर इलाक़े का समान विकास जैसी बातें हों.

ज़मीन और किसान

कृषि को उद्योग का दर्जा देकर उसके लिए संघीय ढांचा विकसित करने पर भी किसी का ज़ोर नहीं है. कोई पार्टी ऐसी नहीं है, जो इनकी समस्याओं को अपना प्रमुख मुद्दा बनाए और ये कहे कि जब उसकी सरकार हो, तब किसानों की एक इंच ज़मीन भी सेज़ के तहत नहीं ली जाएगी. कहने को भारत कृषि प्रधान देश है, पर किसानों की ज़रूरतों और उनकी कृषि संबंधी परेशानियों पर ग़ौर करने का समय किसी दल के पास नहीं.

पर्यावरण

ग्लोबल वार्मिंग से दुनिया का अस्तित्व ख़तरे में है, तो क्या हुआ? भारत के राजनेताओं के लिए यह फिक्र की बात नही है. रिहाइशी इमारतों की खातिर हरे-भरे जंगलों का सफाया हो रहा है. नदियां प्रदूषित हो रही हैं. फैक्ट्रियों का ज़हरीला पानी नदियों में गिरने, शव बहाने, जलाने से लेकर किनारों को शौच के लिए इस्तेमाल करने से देश की सभी प्रमुख नदियां नाले में तब्दील होती जा रही हैं. पर इस बाबत किसी को फिक्र नहीं है. मतलब ये कि मुद्दे बस वही हैं, जिन्हें तूल दिया जा सके और भावनात्मक तौर पर लोगों को बरगलाया जा सके. मंदी और महंगाई पर सभी पार्टियों के बड़े-बड़े दावे और वादे हैं, पर इन पर काबू कैसे पाया जाए, इसकी कोई ठोस रणनीति किसी के पास नहीं है. तुर्रा ये कि इस बार का लोकसभा चुनाव सबसे महंगा चुनाव होने जा रहा है. आकलन यह है कि 1952 के पहले लोकसभा चुनाव के मुक़ाबले 2009 का चुनाव दो सौ गुना ज़्यादा महंगा होगा. अनुमान है कि इस चुनाव में चुनाव आयोग और सरकार के लगभग 40 अरब रुपए खर्च होंगे. जबकि राजनीतिक दलों का 18 अरब रुपया खर्च होगा. यह आंकड़ा आधिकारिक है, जबकि चुनाव आयोग की नज़र बचा कर इससे कहीं ज़्यादा खर्च होने का अनुमान है. ऐसे में भला महंगाई कम हो जाए, इसकी उम्मीद भी कैसे की जा सकती है.

घोषणापत्र

इन सबके बीच कांग्रेस अपनी हुकूमत के गुन गा रही है और बीजेपी सरकार की पोलपट्टी खोलने में जुट गई है. सीपीएम उदार आर्थिक नीति की आलोचना कर केंद्र सरकार को कठघरे में खड़े कर रही है, तो बसपा सर्वजन के नारे के साथ सत्ता पाने की कोशिश में है. आइए, एक नजर डालते हैं पार्टियों के चुनावी घोषणापत्र पर.

सभी फोटो – प्रभात पाण्डेय

बीजेपी

आतंकवाद और महंगाई जैसे मुद्दों की हवा पहले से ही निकल चुकी है. भाजपा इन्हें अपना हथियार बनाना चाहती तो है, पर वह इन्हें धार नहीं दे पा रही. ले-दे कर उसके पास बचा 'राम का सहारा'. लिहाजा पार्टी पूरे 11 वर्षों बाद घोषणापत्र लेकर आई है. इस बार भी वह 'राम मंदिर' के बासी नारे के साथ लालकृष्ण आडवाणी के सर प्रधानमंत्री का ताज सजाने के हसीन सपने संजो बैठी है. पार्टी के घोषणा पत्र में कहा गया है कि भाजपा अयोध्या में भव्य राम मंदिर बनाने के लिए प्रतिबद्ध है. साथ ही कश्मीर में धारा 370 ख़त्म कर समान नागरिक संहिता लागू करने की बात भी कही गयी है. भाजपा अगर सत्ता में आई, तो गोवंश के संरक्षण के लिए आवश्यक क़ानूनी ढांचा भी बनाएगी. किसानों के कर्ज़ माफ़ करने और सेना और अर्धसैनिक बलों के सभी कार्मिकों को उनके वेतन पर आयकर में छूट देने की भी घोषणा भाजपा ने की है. भाजपा ने एक और चारा फेंका है कि ग़रीबी रेखा से नीचे रहने वाले परिवारों को हर महीने 35 किलो अनाज सिर्फ दो रुपए किलो की दर से मिलेगा. और तो और, भाजपा अपने घोषणा पत्र में मुसलमानों की खुल कर तारीफ़ करती दिख रही है. धर्मांतरण के कारण ईसाई समुदाय से टकराव पर कंधमाल जैसी घटनाओं पर भाजपा की अंतरराष्ट्रीय जगत में बेहद आलोचना हुई थी. इस पर भी भाजपा अपनी सफाई पेश करने में नहीं झिझक रही. हालांकि ये मुद्दे ऐसे कतई नहीं, जो वोटर माई-बाप को रिझा सकें.

भाजपा महासचिव और राष्ट्रीय चुनाव अभियान के इंचार्ज अरुण जेटली फरमाते हैं कि भाजपा हमेशा सत्ता के विकेंद्रीकरण में यक़ीन रखती आई है. इसलिए अगर उनकी सरकार बनती है, तो कई अधिकार, शक्तियां और कार्यप्रणाली राज्यों को दे दी जाएंगी. बड़े स्तर पर रोज़गार के अवसर उपलब्ध कराए जाएंगे. आतंक का जड़ से सफाया कर दिया जाएगा. पर यह भी शोचनीय है कि जब भाजपा सत्ता में थी, तब इस दिशा में ऐसा कोई उल्लेखनीय काम उसने नहीं किया, जिससे देश की जनता का भला हुआ हो. सांप्रदायिक एकता के मसले पर भी इन दिनों भाजपा अपना ज्ञान बघारने में लगी है. ज़रा उसके चिंतन की एक बानगी देखिए. वह अल्पसंख्यक समाज से अपील कर रही है कि वह सच और झूठ में फर्क समझे. बीजेपी को इसलिए वोट दे, क्योंकि यही एक ऐसी पार्टी है जो इस्लाम के साथ-साथ हर धर्म का पूरी तरह आदर करती है. क्यों जेटली साहब? वरुण गांधी के ज़हरबुझे भाषण के बाद भी आप यही कहेंगे.

कांग्रेस

कांग्रेस पार्टी का अपना अलग सुर है. इसके नेता वीरप्पा मोइली कहते हैं कि सांप्रदायिक ताक़तों से लड़ने के अलावा जो सबसे बड़ी चिंता है, वह यह कि कैसे देश की बढ़ती जनसंख्या पर काबू किया जाए. इस बार भी कांग्रेस ने उन्हीं मुद्दों का सहारा लिया है, जिनको वह पहले से भुनाती आई है. बेरोज़गारी दूर करना, खाद्यान्न सुरक्षा, महिला सशक्तीकरण, दलित-वंचित और कमज़ोर जमात की सामाजिक सुरक्षा, हर परिवार को रोज़गार, किसानों को सुविधा, बेहतर शिक्षा, एकता, आर्थिक प्रगति जैसे मुद्दों को कांग्रेस के घोषणापत्र में अहमियत मिली है. खैर, पहले कांग्रेस का नारा था, कांग्रेस का हाथ, आम आदमी के साथ. इस बार नारा है, 'आम आदमी के बढ़ते क़दम, हर क़दम पर हो भारत बुलंद'. कांग्रेस ने गुमान के साथ ये एलान किया है कि इस देश का विकास अगर कोई कर सकता है, तो वह सिर्फ कांग्रेस ही है.

मंदी और महंगाई पर सभी पार्टियों के बड़े-बड़े दावे और वादे हैं, पर इन पर काबू कैसे पाया जाए, इसकी कोई ठोस रणनीति किसी के पास नहीं है. तुर्रा ये कि इस बार का लोकसभा चुनाव सबसे महंगा चुनाव होने के आसार हैं. आंकलन यह है कि 1952 के पहले लोकसभा चुनाव के मुकाबले 2009 का चुनाव दो सौ गुना ज़्यादा महंगा होगा.

बेरोज़गारी

मंदी के कारण नौजवान नौकरियां गंवा रहे हैं. उद्योग-धंधे दम तोड़ रहे हैं, लेकिन बड़े स्तर पर रोज़गार के अवसरों को बढ़ाने पर किसी का फोकस नहीं है. खासकर मैन्यूफैक्चरिंग, कंस्ट्रक्शन, टेक्सटाइल और इंफ्रास्टक्चर के क्षेत्र में. ताकि ज़्यादा से ज़्यादा लोगों को रोज़गार मिल सके और बेरोज़गारी की समस्या से निजात मिल सके.

पानी

वाकई लानत है ऐसी सरकारों पर, जो आज़ादी के साठ सालों बाद भी देश की जनता को पीने का शुद्ध पानी मुहैय्या कराने में नाकाम रहीं. लोग बूंद-बूंद पानी को तरसते रहे और पानी बोतलों में बंद कर बेचा जाता रहा. लोगों के हलक सूखते रहे और कंपनियां मालामाल होती रहीं.

अन्य दल

बसपा ने एक बड़ा पासा फेंका है कि अगर केंद्र में उसकी सरकार बनी, तो वह सवर्णों को भी आरक्षण देगी. माकपा बीमा और रिटेल सेक्टर में विदेशी कंपनियों को अपनी पकड़ नहीं बनाने देगी. पेट्रोल, डीज़ल के दाम कम कर वह लोगों को राहत दिलाने का भरोसा दिला रही है. उसकी यह भी घोषणा है कि जब वह सत्ता में होगी, तो कंपनियों के निजीकरण की प्रक्रिया ख़त्म कर दी जाएगी. लाख हाथ-पैर मारने के बाद समाजवादी पार्टी के पास ले-दे कर एक ही मुद्दा है, और वह है धर्मनिरपेक्षता का. सपा मुसलमान मतदाताओं को रिझाने का कोई मौक़ा हाथ से गंवाना नहीं चाहती. कुल मिलाकर देश और इसकी अस्मिता से जुड़े सवाल भी हाशिए पर ही हैं. हालांकि हरेक पार्टी खुद को सबसे बड़ा देशभक्त बताते नहीं थकती. इधर राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी के मुखिया शरद पवार के अलग पैंतरे हैं. लेकिन मुद्दों के नाम पर उनके हाथ में भी कुछ खास नहीं. तकाज़े ताक पर हैं और कोरे वादे उफान पर. जो कुछ भी है, वह महज सियासत है, जनता के निहितार्थ नहीं. वैसे अगर ये राजनीतिक पार्टियां अतीत पर नज़र डालें, तो पाएंगी कि कई चुनाव सिर्फ और सिर्फ मुद्दों पर जीते गए हैं. एक बार तो केवल प्याज के बढ़े दामों ने सत्ताधारी दल को रुला दिया था. 1971 में 'गरीबी हटाओ', 1977 में 'लोकतंत्र बचाओ', 1984 में इंदिरा की हत्या के बाद की 'सहानुभूति लहर', 1989 में 'बोफोर्स घोटाला', 1991 में 'मंडल-कमंडल' और 1996 में 'राम मंदिर'. इन मुद्दों ने विभिन्न चुनावों के दरम्यान सियासत की पूरी तस्वीर ही बदल कर रख दी थी. 2004 के लोकसभा चुनाव में भी कमोबेश यही स्थिति थी. मतदाताओं को भाजपा के 'इंडिया शाइनिंग' के नारे की तुलना में 'कांग्रेस का हाथ,आम आदमी के साथ' ज़्यादा भा गया था. पर इस बार जो हालात दिख रहे हैं, उसमें लगता नहीं कि कोई भी वादा या नारा मतदाताओं के मन को छू भी पाएगा. क्योंकि इस चुनाव में कई मुद्दों की खिचड़ी ही पकती दिख रही है. संभावना इस बात की ज़्यादा है कि यह चुनाव निपट स्थानीय मुद्दों और व्यक्तियों पर केंद्रित हो. और उसी आधार पर जीत हासिल कर कोई भी गठबंधन सरकार बनाने में सफल हो.

ruby.chauthiduniya@gmail.com

सुरक्षित रहेगा दुनिया का

काला धन

राहुल मिश्र

काले धन के सामने विश्व के 20 सबसे शक्तिशाली नेताओं ने भी घुटने टेक दिए. जी-20 की बैठक से पहले ही स्विस बैंकों में जमा काले धन को सार्वजनिक करने पर नेताओं के बयान आने शुरू हो गए थे. अमेरिका के राष्ट्रपति बराक ओबामा और फ्रांस के राष्ट्रपति निकोलस सरकोजी ने इतनी गंभीरता से इस सवाल को उठाया कि दुनिया भर में कई विश्लेषकों को लगा कि इस बार जी-20 की बैठक में काले धन को लेकर निर्णायक फ़ैसला होगा. स्विस बैंकों के काले कारनामे पर लगाम लगेगी. दुनिया भर के उन नेताओं और अधिकारियों के नाम बाहर आएंगे, जिन्होंने अपनी जनता के पैसे लूट कर यहां छुपा रखा है. लेकिन दुनिया भर के विश्लेषक ग़लत साबित

हुए. हैरानी की बात यह है कि वैश्विक मंदी की वजह काला धन और हेज फंड्स को बताया जा रहा है. इसके बावजूद दुनिया के सर्वशक्तिमान नेता इसके ख़िलाफ़ कोई निर्णायक फ़ैसला लेने में असफल रहे.

जी-20 बैठक का सबसे अहम फ़ैसला विश्व बैंकिंग प्रणाली को सुनियोजित करने का है. जहां एक तरफ बड़े बैंक-मैनेजरों की आमदनी में कटौती की बात की जा रही है, वहीं दूसरी तरफ मुद्रा बाज़ार में यूरोपीय देशों की ऐसी परंपराओं पर लगाम लगाने की बात है, जिसे वैश्विक आर्थिक मंदी के लिए ज़िम्मेदार भी माना जा रहा है. ऐसी ही एक प्रणाली हेज फंड की है. इसे यूरोपीय मॉडल का जुआ भी कहा जा सकता है और इसी के दुरुपयोग से अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में समय-समय पर झटके लगते रहते हैं. एक दिन की इस बैठक में हेज फंड पर लगाम लगाने की बात तो की गई, लेकिन वह लगाम कैसे लगेगी, इस पर कोई आम राय नहीं बन सकी और न ही बनाने की कोशिश की गई. वहीं बैंक मैनेजरों की तनख्वाह की कटौती का मुद्दा महज मुद्दा बन कर रह गया. इसके अलावा चीन पिछले कुछ समय से डॉलर को अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा के दर्जे से हटाने की कवायद में लगा है. वह समय-समय पर अंतर्राष्ट्रीय मुद्राकोष से इस बाबत गुहार भी लगाता रहा है. दरअसल, चीन के पास अमेरिकी डॉलर का सबसे बड़ा विदेशी मुद्रा भंडार है. जिस तरह से अमेरिकी डॉलर का बाज़ार भाव गिर रहा है, उसे डर है कि कहीं अमेरिका ज़्यादा डॉलर छापने पर मजबूर न हो जाए और उसे इसका नुक़सान उठाना पड़े. उसकी तमाम कोशिशों के बावजूद इस मुद्दे पर जी-20 कोई फ़ैसला नही ले सका, बशर्ते चीन को संतुष्ट करने के लिए मुद्रा कोष के लिए एक नई मुद्रा का फ़ैसला कर लिया गया, जिसे एसडीएफ (स्पेशल ड्राइंग राइट्स) कहा जाएगा. इसके साथ ही सदस्य देश मुद्रा कोष में जमा सोना ख़रीद सकते हैं, जिसके लिए वह अपनी मुद्रा का इस्तेमाल कर सकते हैं.

इस शिखर वार्ता में सबसे विवादास्पद मुद्दा काले धन का रहा. दुनिया भर के नेता, बिजनेसमैन और अधिकारियों ने द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद बेलगाम सरकारों के कामकाज के तरीक़ों का फ़ायदा उठा कर खूब धन कमाया. कोलोनियल युग की क़ब्र पर स्थापित इस व्यवस्था में 'कोलोनियल हैंगओवर' नहीं गया. नतीजतन नागरिकों के हित संचालन के लिए बनी नई व्यवस्था में इन ठेकेदारों ने अकूत पैसा बटोर लिया. इस तरह जमा किए गए काले धन को सीधे बैंकिंग व्यवस्था में नहीं डाला जा सकता, जिसके लिए दुनियाभर में कई 'टैक्स हैवन' पनप कर सामने आ गए. जी-20 समिट के कुछ दिन पहले से ही फ्रांस और जर्मनी टैक्स चोरी की अंतर्राष्ट्रीय समस्या को जी-20 समिट में उठाने की तैयारी कर रहे थे. ऐसे देश, जो टैक्स चोरी करने वालों के लिए जन्नत बने हैं, उन पर लगाम लगाने के लिए उसने लिस्ट भी बना कर रख ली. आपको बता दें कि स्विटज़रलैंड एक ऐसा ही देश है, जहां दुनियाभर के लोग अपनी ब्लैकमनी छिपाते हैं. अमेरिका, चीन, रूस, जापान, इंग्लैंड और भारत समेत कई देशों के हज़ारों नागरिकों के गोपनीय खाते अकेले स्विटज़रलैंड के बैंकों में खुले हैं.

फ्रांस और जर्मनी, बैठक से पहले इस बात पर आमादा थे कि ऐसे बैंकों और देशों को ब्लैकलिस्टेड किया जाए और वहां जमा खरबों स्विस डॉलर वापस देशों की अर्थव्यवस्था में लगाया जाए. वहीं बैठक से पहले बराक ओबामा भी इन बैंकों को खंगालने की कोशिश कर रहे थे, जिसके चलते अमेरिकी सरकार ने तकरीबन 250 अमेरिकियों की एक सूची स्विस बैंक से निकलवा कर उन पर कार्रवाई भी शुरू कर दी है. मतलब साफ है कि काले धन के इन अड्डों की गोपनीयता अब मुद्दा नहीं है. शक्तिशाली देश अगर चाहें, तो वह आसानी से 'टैक्स हैवन' कहे जाने वाले देशों से गोपनीयता ख़त्म करने को कह सकते हैं. फिर वह भी अमेरिका की तरह अपने-अपने देशों के खाताधारकों का ब्यौरा निकलवा सकते हैं. इस ब्यौरे का भी वह दो तरह से इस्तेमाल कर सकते हैं. पहला, देश के पैसे को वापस लाकर उसे मुद्रा बाज़ार में लगाएं और देश की अर्थव्यवस्था को मज़बूत करें, या फिर इस लिस्ट के जरिए वो आंतरिक लड़ाई या फिर सीधे तौर पर कहा जाए, तो ब्लैकमेल करने की राजनीति भी कर सकते हैं. फ्रांस, जर्मनी और अमेरिका जब इन बैंकों को इतना ख़तरनाक मान रहे हैं, तो क्यों एकदिनी इस बैठक में इस मुद्दे पर कोई ठोस फ़ैसला नहीं लिया गया. इससे भी ज़्यादा ताज्जुब इस बात का है कि आख़िर ऐसा क्या हुआ कि स्विटज़रलैंड के बैंकों को 'टैक्स हैवन' की बनी काली सूची से बाहर कर दिया गया. बहरहाल, बैठक में इस मुद्दे पर कुछ भी हुआ हो, इतना साफ है कि एक बार चीन, जापान और भारत समेत कई देशों के खरबपतियों की नींद इस डर से ज़रूर उड़ गई होगी कि कहीं इस बैठक में कोई अहम फ़ैसला न ले लिया जाए.

जी-20 की एकदिन की बैठक में क्या दुनिया की मौजूदा सबसे

फ्रांस और जर्मनी, बैठक से पहले इस बात पर आमादा थे कि ऐसे बैंकों और देशों को ब्लैकलिस्टेड किया जाए और वहां जमा खरबों स्विस डॉलर वापस देशों की अर्थव्यवस्था में लगाया जाए. वहीं बैठक से पहले बराक ओबामा भी इन बैंकों को खंगालने की कोशिश कर रहे थे, जिसके चलते अमेरिकी सरकार ने तकरीबन 250 अमेरिकियों की एक सूची स्विस बैंक से निकलवा कर उन पर कार्रवाई भी शुरू कर दी है.

बड़ी समस्या का हल निकाला जा सकता है. महज एक महीने की मेहनत के बाद क्या बराक ओबामा और गॉर्डन ब्राउन विश्व आर्थिक मंदी पर लगाम लगाने का फॉर्मूला बना सकते हैं. क्या 70 साल से चली आ रही अमेरिकी और यूरोपीय वित्त व्यवस्था को वाइन टेबल पर बदला जा सकता है? दुनिया को नई व्यवस्था या नया आर्थिक मॉडल दिया जा सकता है? क्या किसी गैर-सरकारी संगठन के फ़ैसलों पर यक़ीन किया जा सकता है? खासतौर पर तब, जब वह संगठन दूसरे विश्वयुद्ध के बाद बने एक शक्ति संगठन जी-7 का विस्तार हो.

सवाल ही नहीं पैदा होता. और जब जी-20 खुद इस बात को ताल ठोंक कर कहे कि उसकी बैठक सफल रही और वह किसी तर्कसंगत नतीजे पर पहुंच गए हैं, तो वह नतीजे खुद-ब-खुद संदेहास्पद हो जाते हैं. पश्चिमी मूर्ख दिवस पर शुरू हुई यह बैठक आख़िर किसे मूर्ख बना रही है.

जी-20 की एकदिनी बैठक ख़त्म होने के तुरंत बाद बराक ओबामा और गॉर्डन ब्राउन ने घोषणा कर खुशी जाहिर की कि दुनिया के बीस बड़े देशों ने मंदी से लड़ने के लिए साझा रणनीति पर सहमति बना ली है. इस घोषणा से फ्रांस, जर्मनी और जापान भी सहमत दिखे, भले ही उन्होंने कोई निजी प्रतिक्रिया देना मुनासिब नहीं समझा. शायद इसलिए कि बैठक में उनके उठाए मुद्दों पर कोई ख़ास फ़ैसला नहीं हो सका. चीन, रूस और ब्राजील के साथ-साथ भारत ने भी मुस्करा कर जी-20 की सफलता का इजहार कर दिया, और ख़ास तौर पर भारत बैठक के दौरान अपनी ही पीठ थपथपाता दिखा.

क्या जी-20 ऐसा संगठन है, जिसकी भूमिका मंदी के इस दौर में कोई अहमियत रखता है? क्या जी-20 के सभी देश मंदी की एक समान मार झेल रहे हैं. अमेरिका के साथ-साथ कुछ यूरोपीय देश मंदी की चपेट में ज़रूर हैं. अमेरिका की बैंक प्रणाली पर सवालिया निशान लग चुका है. रीढ़ की हड्डी कहा जाने वाला सिटी-बैंक गंभीर बीमारी से ग्रस्त हैं. बेरोज़गारी का ग्राफ किसी बुलेट ट्रेन की माफिक दौड़ रहा है. यहां तक कि जी-20 बैठक के अगले ही दिन आए बेरोज़गारी के आंकड़े मंदी के ख़िलाफ़ जारी अमेरिकी जंग को झुठला गए. अधिकांश यूरोपीय देश मंदी की चपेट में हैं. यूरोप की कई फाइनेंस प्रणालियां मंदी को और ख़तरनाक बनाने का काम कर रही है.

ऐसे में जी-20 के सभी देशों को यह साफ है कि फिलहाल मंदी अमेरिका और यूरोप की बीमारी है और वह इसे दूर करने की हरसंभव कोशिश करेगा. इसी पृष्ठभूमि में जी-20 देशों की एकदिनी आपात बैठक रखी गई, जहां कई अहम फ़ैसले किए जाने का दावा किया जा रहा है.

जी-20 चार अहम फ़ैसलों का दावा कर रही है. पहला, कि अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष में तीन गुना अधिक धन जमा किया जाएगा. इस तरह जमा हुए एक ट्रिलियन डॉलर का बंटवारा मंदी और ग़रीबी झेल रहे देशों को बतौर कर्ज़ देकर किया जाएगा. इस बैठक में मुद्राकोष को पैसा मुहैया कराने का ढिंढोरा ज़रूर पीटा गया, लेकिन यह साफ नहीं किया गया कि यह पैसा लाया कैसे जाएगा. क्या अमीर देश आईएमएफ को लोन देंगे और उसी लोन को आईएमएफ ग़रीब देशों को आगे बढ़ा देगा. अगर ऐसा नहीं, तो 1.5 ट्रिलियन की रक़म को पूरा करने का क्या फॉर्मूला अपनाया जाएगा, क्योंकि वोटिंग अधिकार के मुताबिक मेंबर देशों से आने वाला पैसा पहले ही तय किया जा चुका है और उसमें जी-20 फोरम का कोई योगदान नहीं रहा है. फंड में बढ़ोत्तरी के अलावा मुद्राकोष के नियम और संचालन में कोई फेरबदल का मुद्दा इस बैठक में नहीं उठाया गया, क्योंकि आईएमएफ 185 देशों का संगठन है, जबकि जी-20 महज 20 अमीर देशों का संगठन है, जो अपने हित के लिए विश्व को बाज़ार की तरह देखता है और अपने हित में फ़ैसले लेता है.

एक पुरानी कहावत है कि अमेरिका किसी को मुफ्त में कुछ नहीं देता. आईएमएफ को तीन गुना किए जाने से इतना तो ज़रूर है कि इससे एशिया और अफ्रीका के ग़रीब देशों को फ़ायदा पहुंचेगा, बशर्ते दिए जा रहे लोन तर्कसंगत और न्यायसंगत हों.

अमेरिका की कमान में अफगानिस्तान और पाकिस्तान में आतंकवाद के ख़िलाफ़ युद्ध लड़ा जा रहा है. द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद से अस्तित्व में आए शक्तिशाली देशों के संगठन नाटो (नॉर्थ अटलांटिक ट्रीटी ऑर्गनाइजेशन) के देश इराक युद्ध के खर्च से सबक लेकर अब युद्ध का दारोमदार घरेलू अर्थव्यवस्था पर डालने से कतरा रहे थे. ऊपर से विश्व आर्थिक मंदी के इस दौर में यह करना तो दूर, सोचना भी उनके लिए वाजिब नहीं. खुद अमेरिका जॉर्ज बुश की ग़लतियों से सबक ले चुका है और उसे दोहराने की ग़लती नहीं कर सकता. लेकिन अफगानिस्तान और पाकिस्तान के साथ-साथ इराक में जारी युद्ध एक वास्तविकता है. ऐसी वास्तविकता, जिसकी प्रति सेकेंड क़ीमत हज़ारों डॉलर है. लिहाजा आईएमएफ में डॉलर की मौजूदगी ही एक कारगर क़दम है, जिससे अमेरिका और उसके मित्र देशों के मंसूबे साकार हो सकते हैं. आईएमएफ का फंड तीसरी दुनिया के ग़रीब देशों को ग़रीबी उन्मूलन और विकास के लिए दिया जाता है. जी-20 देशों की इस शिखर वार्ता के दौरान ही आईएमएफ पाकिस्तान को आतंकवाद से लड़ने के लिए सैन्य सहायता राशि दे रही है और यह भी सिफारिश कर रहा है कि पाकिस्तान को इस युद्ध को लड़ने के लिए मुद्राकोष से और भी ऋण दिया जाना चाहिए. कहीं अमेरिका और नाटो देश इस फिराक में तो नहीं कि आईएमएफ के जरिए पाकिस्तान को ऋण देकर वह घरेलू दबाव से भी बच सकते हैं और आतंकवाद के ख़िलाफ़ लड़ाई में अन्य एशिआई देशों को भी शामिल कर सकते हैं. इन तीन मुद्दों पर अगर जी-20 ऐलान करता है कि उसकी बैठक काफी अहम रही, विश्व आर्थिक मंदी को काबू करने में एक कारगर कदम उठाने में वो सफल रहा और यह फ़ैसला एक नई विश्व-व्यवस्था का निर्माण करेगा, तो जाहिर है लोगों को बेवकूफ बनाया जा रहा है. जिस तरह से बैठक के पहले बराक और ब्राउन राजनयिकों से मिल रहे थे और इस कोशिश में थे कि बैठक की सफलता पहले सुनिश्चित कर ली जाए, इससे साफ है कि सारे विवादों को दरकिनार करने की सलाह पहले ही हो गई थी और इस बैठक को महज घोषणा के लिए इस्तेमाल किया गया.

feedback.chauthiduniya@gmail.com

देश भर में सनातन संत-सूफी यात्रा

घूम-घूम कर अलख जगाएंगे संत और दरवेश

देश के कोने-कोने से साधु संत और सूफी दरवेश दिल्ली में जुटे और सांप्रदायिक सदभाव के लिए अमन यात्रा की शुरुआत की. *तस्वीर प्रभात पांडेय की.*

देश में इस बार आम चुनाव बेहद अहम समय पर हो रहे हैं. यह चुनाव देश की दशा और दिशा तय करेगा. सांप्रदायिक ताक़तें एक बार फिर अपना सर उठा रही हैं. यही ताक़तें देश के माहौल में ज़हर घोलने की तैयारी कर रही हैं. वरुण गांधी के ज़हर भरे बयान के बाद उनको सज़ा हुई. अब इसी का बहाना बना कर कुछ संगठन देश में आंदोलन खड़ा करने की धमकी दे रहे हैं.

धर्म के नाम पर फसाद करने की तैयारी हो रही है. इतना ही नहीं, भाजपा ने तो 11 सालों बाद अपना घोषणापत्र जारी किया, लेकिन उसमें देश की तरक्की और विकास के लिए कुछ भी नहीं था, बल्कि वह वापस अपने सांप्रदायिक एजेंडे पर लौट आई है. बाबरी मस्जिद की शहादत के लिए जिम्मेदार यह पार्टी एक बार फिर अपना पुराना राग आलाप रही है, राम मंदिर, अनुच्छेद 370 और यूनीफॉर्म सिविल कोड लागू करने की मंशा जाहिर कर रही है. जाहिर है कि यह समय संकट का है और देश की जनता को सावधान रहने की ज़रूरत है.

ऐसे दुविधा और संशय से भरे समय में इसी मकसद को लेकर अयोध्या और देश भर के साधु-संत, धर्माचार्य और सूफी दरवेश पूरे देश में घूम-घूम कर शांति का संदेश दे रहे हैं. 8 अप्रैल को नई दिल्ली के प्रेस क्लब में एक प्रेस कांफ्रेंस कर इन सभी संत-सूफियों ने अपनी यात्रा की शुरुआत की. इनकी यात्रा पूरे पंद्रह दिन चलेगी और कुल मिला कर ये संत 14 शहरों की यात्रा करेंगे. ये सभी शहर देश के कोने-कोने में हैं. बिहार में पटना, झारखंड में रांची, मध्य प्रदेश में भोपाल, आंध्र प्रदेश में हैदराबाद, उत्तर प्रदेश में बनारस, लखनऊ, अयोध्या और इलाहाबाद, तो गुजरात में अहमदाबाद, कर्नाटक में बेगलुरु, असम में गुवाहाटी और राजस्थान में जयपुर जाएंगे. पंद्रह दिनों तक चलनेवाली इस अमन यात्रा में लोगों को भाईचारा, अमन और शांति का संदेश देंगे.

इस यात्रा में श्री राम जन्मभूमि मंदिर निर्माण न्यास, अयोध्या के अध्यक्ष महंथ जनमेजय शरण जी महाराज, अवंतिकापुरी, मध्य भारत के अवंतिका पीठाधीश्वर जगतगुरु स्वामी प्रेमानंद जी महाराज, श्रीराम इंटरनेशनल, हरिद्वार के स्वामी उमाकांतानंद जी महाराज, जनकपुरधाम के पीठाधीश्वर स्वामी रामटहल शरण जी महाराज, स्वामी हरिदास आश्रम, रायबरेली के महंत लक्ष्मणदास जी महाराज, ब्रह्म पीठ पुष्कर, अजमेर के स्वामी शिवरतन शरण जी महाराज, वर्ल्ड सूफी काउंसिल, अजमेरशरीफ के अध्यक्ष मोहम्मद सूफी गिलानी कत्तान, सैय्यद हाजी मोहम्मद अब्दुल्ला (सूफी लाल मोहम्मद चिश्ती दरगाह, राउरकेला, उड़ीसा), सैय्यद मोहम्मद ताहिर (शेख हारून रशीद दरगाह, बड़ौदा, गुजरात)और सैय्यद मोहम्मद सादतुल्ला (दरगाह सैय्यद यासीन शाह बुखारी, हैदराबाद) के नाम प्रमुख है.

संत पूरे देश को यही संदेश देना चाहते हैं कि इस वक्त आपसी भाईचारे और अमन की सबसे अधिक जरूरत है. जो भी सनातन धर्म या इस्लाम की ग़लत व्याख्या कर इस देश के सांप्रदायिक सौहार्द को बिगाड़ना चाहते हैं, तो वह बिल्कुल ही ग़लत है. त्याग, सहिष्णुता, बंधुत्व और वसुधैव कुटुंबकम के दर्शन वाले इस देश में कुछ शैतान अगर अपने मंसूबे पूरे भी करना चाहें तो उसे पूरा नहीं होने दिया जा सकता. इस संत-सूफी यात्रा में अयोध्या के महंथ, मठाधीश और दुनिया भर में मशहूर सूफी हिस्सा ले रहे हैं.

संतों का कहना है कि वह एक साथ इसलिए निकले हैं कि कभी-कभार दुष्ट और शैतानी शक्तियां इकट्ठा हो जाती हैं, और उनका एक साथ मिलना भले लोगों के लिए दिक्कत का सबब हो जाता है. ये अपने आश्रमों और ख़ानक़ाहों से इसलिए निकले हैं कि एक साथ होकर इन बुरी ताकतों का मुकाबला कर सकें. हमारा देश, हमारा मुल्क अगर बचा है, तो इसी गंगा-जमनी तहजीब की वजह से. संतों और सूफियों का कहना है कि वे इस देश के उन सभी सनातन धर्मियों (हिंदुओं) को आवाज़ देने निकले हैं, जो अमनपसंद हैं, जो अपने पड़ोसियों की तरक्की देखना चाहते हैं, जो मार-कटाई से नफ़रत करते हैं, जो सुख-दुख में अपने हमवतन दोस्तों के काम आना चाहते हैं, उनके होठों पर मुस्कान लाना चाहते हैं. संत और सूफी जानते हैं कि इस देश का हरेक हिंदू अमनपसंद है, बस कुछ शैतान ताकतें हैं जो उनको बहका कर अपना काम करना चाहती हैं. यही बात इस देश के मुसलमानों या बाकी अक़लियत के साथ भी है. आम इंसान या मजहब को मानेवाला, खुदा से डरनेवाला इंसान अमनपसंद ही होता है. वह कभी भी दूसरों का घर नहीं जलाना चाहता, क्योंकि उसे पता है कि आखिर में उसे भी जवाबदेह होना पड़ेगा.

संत अपनी इसी अपील को लेकर पूरे देश में घूमेंगे और जनता से अपनी जवाबदेही समझने और ढंग के उम्मीदवार चुनने की अपील करेंगे. खास बात यह होगी कि वे किसी खास पार्टी के लिए वोट डालने की अपील नहीं करेंगे, बल्कि दलगत भेदभाव से ऊपर उठकर बेहतर उम्मीदवारों को जिताने के लिए जनता से अपील कर रहे हैं, ताकि देश में एक बेहतर सरकार बन सके.

संतों-सूफियों ने कहा है कि फिलहाल मुल्क के सामने दो रास्ते हैं. एक रास्ता खुशहाली और तरक्की की ओर जाता है. दूसरा रास्ता कत्लोगारत, दंगे और बदहाली की ओर ले जाता है. अगर मुल्क की तरक्की चाहिए तो जनता को ऐसे लोगों को चुनना चाहिए. जो देश को जानते हों, मुल्क के हालात समझते हों और अमन और भाईचारे को बढ़ावा देते हों. संतों का यह भी कहना है कि वे किसी पार्टी के लिए प्रचार नहीं कर रहे हैं, बल्कि मुल्क की खुशहाली के लिए यह यात्रा कर रहे हैं.

उन्होंने कहा कि हर वह उम्मीदवार वोट का हक़दार है, जो शरीफ हो, अमनपसंद हो, जम्हूरियत के मायने समझते हों, गरीबों और अकलियत की भलाई के लिए काम कर सकते हों और जिनके पास विकास की एक मुकम्मल तस्वीर हो. सूफियों और संतों का कहना है कि अगर ऐसा नहीं हुआ, तो बर्बादी और बदहाली से हमें कोई नहीं बचा सकता.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback.chauthiduniya@gmail.com

हिंदू होने का धर्म

पिछले अंकों में हम सनातन धर्म की प्रकृति और प्रवृत्ति के बारे में काफी कुछ चर्चा कर चुके हैं. इस अंक में हम सनातन धर्म के मूलभूत तत्वों पर चर्चा करेंगे. सबसे पहली बात तो यह जानने की है कि सनातन धर्म का कोई एक संस्थापक नहीं है. न ही, बाइबिल या कुरान जैसी कोई मार्गदर्शक (एकमात्र) किताब है, जिसे किसी भी भ्रम या विवाद की स्थिति में अंतिम या सर्वमान्य मान लिया जाए.

इसी का परिणाम है कि सनातन धर्म के अनुयायियों को किसी एक विचार से बंधे रहने या उसी को मानने की बाध्यता नहीं है. सनातन धर्म इसी वजह से सांस्कृतिक अधिक है, सांप्रदायिक नहीं. साथ ही, यह समझना भी गलतफहमी होगी कि सनातन धर्म का कोई केंद्रीय मत नहीं है. सनातन धर्म का केंद्रीय मत यही है कि सत्य एक है, और उस तक पहुंचने या उसे व्यक्त करने के रास्ते अलग-अलग हैं. यही वजह है कि सनातन धर्म का लगातार विकास और उद्भव होता रहा है. यह उन लोगों से संबद्ध रहा है, जो इससे जुड़े हैं और लगातार क्रमिक विकास से ही सनातन धर्म का प्रवाह बना हुआ है.

सनातन धर्म आध्यात्मिकता के परे भी कहीं जाता है. जैसा हमने पहले भी बताया है कि धर्म का संबंध हमारे रोज़मर्रा के जीवन से है. हम आज जिन्हें हिंदू (सनातन) धर्म की किताबें कहते हैं, उनमें धार्मिक किताबों के अलावा औषधि और विज्ञान की भी किताबें हैं. तभी तो आयुर्वेद को पंचम वेद कहते हैं. इसी वजह से सनातन धर्म को हम तथाकथित रिलीजन के संदर्भ में इस्तेमाल नहीं कर सकते, न ही यह कोई अधिभौतिक ज्ञान की शाखा ही है. न ही इसे केवल सांसारिक मसलों के संदर्भ में इस्तेमाल कर सकतेहैं. दरअसल, सनातन धर्म कर्मकांड और ज्ञानकांड का ऐसा संगम है, जिसे किसी निश्चित दायरे में बांधा नहीं जा सकता. सच पूछा जाए तो सनातन धर्म का मतलब एक ऐसी सभ्यता है, जो आज भी लगातार बढ़ और फैल रही है.

इसके लगातार विकासशील होने की वजह से ही सनातन धर्म किसी एक पंथ पर कट्टर नहीं हुआ. यहां वाद के साथ प्रतिवाद भी हुए. यही वजह है कि वेदों के बाद वेदांत की घोषणा हुई. आधुनिक युग में भी जब कई रूढ़ियों और अंधविश्वासों ने सनातन धर्म पर कब्जा कर लिया, तो तुरंत ही चिंतकों और विचारकों ने उसके खिलाफ प्रतिवादी आंदोलन शुरू किया-चाहे वह मध्यकाल का भक्ति आंदोलन हो, या आधुनिक काल का पुनर्जागरण. मध्यकाल में रामानंद से लेकर कबीर और रैदास ने सनातन धर्म की विकृतियों को सामने लाकर उस पर प्रहार किया. यह भक्ति आंदोलन देश के किसी एक कोने में सीमित नहीं था, बल्कि दक्षिण से लेकर उत्तर तक इसकी धारा समान रूप से बही थी. तभी तो कहा गया-भक्ति द्राविड़ ऊपजी, लाए रामानंद. इसी तरह आधुनिक काल में स्वामी दयानंद सरस्वती, राम मोहन राय से लेकर महात्मा फुले और भीमराव अंबेदकर ने सनातन धर्म की कुरीतियों पर प्रकाश डाला और उनके ख़िलाफ संघर्ष किया.

दरअसल, सनातन धर्म की तुलना हम किसी घोंघे से कर सकते हैं. जब इस पर बाहर से आक्रमण होता है, तो यह खुद को पूरी तरह से सिकोड़ लेता

है, खुद में सिमट जाता है. उसी समय यह अपनी आंतरिक सफाई और सुधार का कार्य करता है. जब यह पूरी तरह से तैयार हो जाता है, तब अपने खोल से निकल कर दुनिया का सामना करता है.

सनातन धर्म एक आयामी नहीं है. इसी वजह से इसका कोई एक मसीह या कोई एक किताब भी नहीं है. आम तौर पर सनातनी उसको माना जाता है, जो वेदों को मार्गदर्शक मानता है. लेकिन यह भी सच है कि वेदांत की घोषणा करने वाले ऋषि भी तो सनातनी ही हैं. एक ही घर में पिता कट्टर मूर्तिपूजक हो सकता है, माता निराकार की पूजा करने वाली हो सकती है और संतानें शैव या शाक्त हो सकती हैं. यही सनातन धर्म की खूबसूरती है. वेदों के बाद उपनिषद भी हिंदू धर्म के मान्य ग्रंथ हैं. आचार्य शंकर ने दस उपनिषदों को ऐसा माना है, जिनमें तमाम उपनिषदों का सार-तत्व समाहित है. इसके अलावा महाभारत और रामायण भी हिंदुओं के लिए पवित्र ग्रंथ हैं. पुराण भी हिंदुओं के लिए पवित्र ग्रंथ हैं, इसमें कई में ऐतिहासिक बातें भी देखने को मिल जाती हैं. सनातन धर्म की किताबों के साथ समस्या यह है कि मूल के साथ-साथ इसमें कई क्षेपक भी जुड़ गए हैं. असल और नकल का भेद करना बड़ा मुश्किल हो जाता है. उदाहरण के लिए, महाभारत में मूल तौर पर केवल 9,000 श्लोक थे, जब इसका नाम जय था. जय से विजय, विजय से भारत और भारत से महाभारत बनीं हुए आज की तारीख में महाभारत में 1,00000 से भी अधिक श्लोक हो गए हैं. अब इसका पता कैसे लगे कि इसमें सही क्या और गलत क्या. यही बात पुराणों के साथ भी लागू है, और इसी वजह से इसमें भी कई मिथक और अविश्वसनीय कथाएं जुड़ गई हैं. जैसे, किसी ने हवा पीकर हज़ारों साल तक तपस्या की, या किसी ने समंदर पी लिया ,वगैरह-वगैरह.

शायद यही कारण है कि सनातन धर्म के साथ आज इतनी उलटबांसियां देखने को मिलती हैं, और धर्म के स्वयंभू ठेकेदार अपने मन से इसकी व्याख्या कर लेते हैं. क्षेपक और मूल के घालमेल ने ही सनातन धर्म के चिरंतन प्रवाह को कई बार बाधित किया है, जिसे दूर करने के लिए ऋषि और मुनि, चिंतक और विचारक हरेक युग में, हरेक समय में आए हैं और सनातन धर्म का सही मतलब हमें बताया है.

हिंदी साहित्य का राग कुलपति

अनंत विजय

पिछले महीने की 28 तारीख़ को दिल्ली के त्रिवेणी सभागार में महात्मा गांधी अंतर्राष्ट्रीय हिंदी विश्व–विद्यालय, वर्धा की तीन पत्रिकाओं का पुनर्जीवन समारोह हुआ. नए संपादकों के साथ तीन पुरानी पत्रिकाओं 'बहुवचन' (संपादक राजेंद्र कुमार), 'हिंदी' (संपादक ममता कालिया) और पुस्तक वार्ता (संपादक भारत भारद्वाज) का विमोचन समारोह बेहद सफल रहा. त्रिवेणी सभागार श्रोताओं से खचाखच भरा था और लोग सीढ़ियों पर बैठे थे. मंच पर हिंदी साहित्य की तीन विभूतियों नामवर सिंह, राजेंद्र यादव और अशोक वाजपेयी के साथ श्रद्धेय कवि कुंवर नारायण और कुलपति विभूति नारायण राय थे.

वैसे असली किस्सा तो समारोह शुरू होने के पहले और बाद का है. समारोह के पहले हर छोटे–बड़े साहित्यकार के बीच कुलपति महोदय के चरणों की धूल लेकर अपने को धन्य करने की होड़ सी मची थी. कुलपति के सामने हाजिरी बजाने की हड़बड़ी में एक वरिष्ठ कवि यह भी भूल गए कि आसपास भी लोग खड़े हैं. उन्होंने तो सरेआम अपने से उम्र में छोटे कुलपति से कहा कि मुझ ग़रीब पर कृपादृष्टि बनाए रखिए.

उनके बात करने का जो अंदाज़ था, वह चापलूसी की सारी हदें तोड़ रहा था. याचक का–सा यह अंदाज़ सिर्फ इन वरिष्ठकवि का ही नहीं बल्कि वहां मौजूद कई साहित्यकारों का था, जो कुलपति से आशीर्वाद लेने के लिए लाइन में खड़े थे. दरअसल कुलपति के इर्द–गिर्द यह जमावड़ा सिर्फ उस दिन नहीं लगा था, यह हालत तो तब से हो गई है, जबसे उन्होंने विश्वविद्यालय का कार्यभार संभाला है. हालांकि यह शर्मनाक स्थिति सतह के ऊपर जितनी दिखाई देती है, सतह के नीचे उससे कहीं ज़्यादा शर्मनाक है. हर छोटा या बड़ा साहित्यकार विभूति नारायण राय के पीछे पड़ा है. कोई चाहता है कि विश्वविद्यालय उसे प्रमुख साहित्यकारों पर फिल्म बनाने का ठेका दे दे, किसी की ख्वाहिश है कि संचयिता के संपादन की ज़िम्मेदारी उसे सौंप दी जाए, कोई विश्वकोष का प्रस्ताव लिए दरवाज़े पर दस्तक

दे रहा है, कोई चाह रहा है कि विश्वविद्यालय द्वारा ख़रीदी जानेवाली पत्रिकाओं में उसकी पत्रिका का भी नाम डाल दिया जाए, हद तो यह हो गई कि विभूति नारायण राय को कुलपति की दौड़ से बाहर करार देने वाला तथा अख़बार में लेख लिखने के एवज में महिला लेखिकाओं से फेवर मांगनेवाला एक पत्रकार मीडिया सेंटर में निदेशक बनने के लिए अपना बायोडाटा लिये गणेश परिक्रमा कर रहा था.

एक बेहद चतुर अधिकारी की तरह कुलपति हर किसी को विश्वविद्यालय मुख्यालय वर्धा आने का न्योता दे रहे थे. इस वजह से सबकी आकांक्षाएं हिलोरें ले रही थी. इस पूरे क़िस्से को बयां करने के पीछे हिंदी के साहित्याकारों की याचक मानसिकता को उजागर करना है. दरअसल आज हिंदी साहित्य की स्थिति इतनी शर्मनाक हो गई है कि जहां भी साहित्यकारों को कुछ लाभ दिखाई देता है, वहीं वे हाथ फैलाए खड़े नज़र आते हैं. सारे आदर्श और ज्ञान सिर्फ लेखन तक सिमट कर रह गया है. जब भी अपनी बारी आती है, तो सारे आदर्श और सिद्धांत ताक पर रख दिए जाते हैं. एक ज़माने में जब अशोक वाजपेयी इस विश्वविद्यालय के कुलपति बने, तो एक वरिष्ठ आलोचक ने उन्हें समकालीन कविता का प्रमुख हस्ताक्षर करार दे दिया, जबकि यही आलोचक महोदय वाजपेयी को पतनोन्मुख परंपरा के सबसे सशक्त और खूबसूरत हस्ताक्षर बताते नहीं थकते थे. उन्हें कलावादी बता कर उनके लेखन को खारिज़ कर दिया करते थे. यह अलग बात है कि बाद में उन्हीं आलोचक को विश्वविद्यालय के संचयिता का संपादन मिला. यह हाल तो शीर्ष आलोचक का था, तो बाक़ी की बात ही क्या की जाए.

मेरे कहने का आशय यह है कि हिंदी के लेखकों से जिस तरह के गरिमापूर्ण और गंभीर व्यवहार की अपेक्षा की जाती है, वे उसके आसपास भी नहीं पहुंच पाते हैं. कुछ लेखकों को अगर छोड़ दें, तो आप पाएंगे कि तमाम लेखक इसी गणित में जुटे रहते हैं कि कहीं से कुछ प्राप्त हो जाए. आप हिंदी के प्रकाशकों से बात कीजिए, तो आपको पता चलेगा कि किताबों के विमोचन समारोह में आने के लिए भी वरिष्ठसाहित्यकार सौदा करते हैं, मार्ग व्यय से लेकर मानदेय तक की बात तय करते हैं. इसमें कोई बुराई नहीं है, लेकिन यह सौदेबाजी टुच्चेपन की हद तक चली जाती है.

तो आज जिस तरह से हिंदी साहित्य में राग कुलपति गूंज रहा है और हर कोई इस राग में डूब कर गीला होना चाहता है, तो दिमाग़ में यही गूंजता है – हाय रे! हमारे मूर्धन्य, हाय रे! हमारे नायक, हाय रे! लेखकीय आदर्श.

feedback.chauthiduniya@gmail.com

वी पी सिंह

संभावनाओं की रात

संभावनाओं की
वह रात
स्पर्शमय हो रही है
कब तक ताश–महल सा
अपने को संभाले रहूं
मेरी हर संधि में
आहटें कांप रही हैं
तुम्हारे आभास मात्र से
मन पर
अचानक कुछ ऐसी बीत जाती है
जैसे
बूंदों से लदी टहनी को
अनजाने में किसी ने छू दिया हो

चेहरे की चहारदीवारी

उसके चेहरे की
चहारदीवारी पर
कितनों ने अपने इश्तिहार
चिपकाए
और वह
अपने चेहरे की
दीवार के उस पार
एक उम्रकैदी की तरह
अपने हाथ में
पैरोल की दरख्वास्त
लिए रह गई

संभावनाएं अभी शेष हैं

बहुत बार सोचा कि मैं भी कुछ ऐसा लिखूं कि मुझे नोबल पुरस्कार मिल जाए. यार–दोस्तों ने समझाया कि यह शगल तंग जेब और खुले हाथ वाले लोगों को नहीं अपनाना चाहिए. मगर, दिल है कि मानता नहीं! अपनी इच्छा, बनी रही – कोशिश में तब्दील नहीं हो पाई. कोशिश करता भी तो कैसे? साहित्य जगत में अपनी कोई साख न पहले थी और न अब है. सो अपनी कामना के दमन का सहारा लेता. फ्रायड ने शायद हम जैसों को ही यह कह कर तसल्ली दी है कि दमित इच्छाओं की पूर्ति के लिए अवचेतन मन सतत क्रियाशील रहता है. स्वप्न के माध्यम से हम अपनी इन्हीं कामनाओं की पूर्ति कर लेते हैं. अस्तु! यह सौभाग्य आख़िर मुझे मिल ही गया. सबसे पहले मोबाइल फोन पर मुझे मेरे एक मित्र ने बधाई दी, तो मैंने पूछा, 'किस बात की बधाई? क्या मुझे नोबल पुरस्कार मिल गया?' उधर से आवाज़ आई, 'बस अब वह दिन दूर नहीं.' मैं गिरगिराया, 'अरे भाई कुछ बता भी दे.

मैं भी तो जानूं कि मैं बधाई का पात्र कैसे हो गया?' उधर से आव–ाज़ आई, 'अरे तेरा खासमखास अब साहित्य केंद्र का सचिव बन गया है. तेरी अध्यक्षता तय.' मैं चौंक गया, 'अरे, क्या बोल रहे हो? मुझे तो कुछ भी समझ में नहीं आ रहा है. कौन सा साहित्य केंद्र और कौन सा खासमखास?' उधर से आवाज़ आई, 'अबे साले. क्या समझना चाहता है? मैं कोई तेरे विरोधी खेमे से तो बोल नहीं रहा हूं कि तुम इस तरह से घिघिया कर बतिया रहे हो. मैं अच्छी तरह जानता हूं कि इस बार साहित्य केंद्र की अध्यक्षता पर तुम दांव लगाने जा रहे हो. मुझसे बनने की कोशिश मत करो... वरना वह सचिव नहीं बना होता.' मैंने पूछा, 'वह कौन?' उधर से आवाज़ आई, 'अरे वही! तुम बन क्यों रहे हो? मैं तो तुम्हारा शुभचिंतक ही हूं. तुम्हें बधाई दे रहा हूं कि मेरा नाम तुम्हारे ज़ेहन में रहे. कभी पुरस्कार–वुरस्कार के मौक़े पर इस यार का नाम भी याद कर लो... और तुम हो कि बन इस तरह रहे हो, जैसे कुछ जानते नहीं.' अब मुझे लगा कि उधर से बोलने वाले को निश्चित रूप से कोई ग़लतफहमी हुई है. मैंने कहा, 'भाई. आपने किसको फोन लगाया है? मैं फलां–फलां बोल रहा हूं और फलां काम करता हूं.' उधर से आवाज़ आयी, 'पहले क्यों नहीं बताया... इतनी देर तक भेजा चाटते रहे...' मैं कुछ बोल पाता कि लाइन कट गई. फोन कटने के बाद भी मेरे मन में अजीब सी पुलकन का अहसास भरा हुआ था. शायद इसलिए कि अनायास ही मुझे साहित्य केंद्र के अध्यक्ष पद तक पहुंचने और पुरस्कार की कतार में खड़े होने का नुस्खा मिल गया था. मैंने मन को तसल्ली दी, चलो, बधाई तो मिली. इस बार अनजाने यार का फोन आया, तो अगली बार क्या पता किसी सच्चे दोस्त का आए! और मैं कविता की कॉपी निकाल कर लिखने बैठ गया...

कितनी सम्भावनाएं अभी शेष हैं...
अशेष हैं
क्योंकि जीवन/ नभ/ थल/ जल/
अशेष है
जैसे वायु!

रविशंकर

feedback.chauthiduniya@gmail.com

अब तक हमने पढ़ा कि सूफी ने तस्करी की राह कैसे देखी. और आगे हम पढ़ेंगे कि वो तस्करी की राह पर कैसे चल पड़ा.

मुसलमान

आबिद सुरती

तनका हिसाब ग़लत नहीं था. तनख़्वाह के तीन सौ रुपए में से सौ रुपए में घर चलाना और बाक़ी दो सौ रुपए इक़बाल (बाल सूफ़ी) के भविष्य के लिए अलग रखना. इसके बावजूद उन्हें इसमें कहीं कोई भूल लग रही थी. उनकी छठी इंद्रिय कह रही थी कि खुदा का हिसाब कुछ और है.

क्या अभी तक मेरे इम्तिहान के दिन ख़त्म नहीं हुए? वे यह सोच रहे थे कि गली के तीन लड़के आकर उनकी चौखट पर खड़े हो गए. बीच के लड़के का चेहरा लहूलुहान था.

'क्या हुआ?' हैरत से देखते हुए हुसेन अली ने पूछा.

'इक़बाल ने इसकी नाक पर घूंसा मारा.'

अब उसको सचमुच आश्चर्य हुआ. अली नाम के जिस लड़के की नाक फूट जाने के कारण उसके चेहरे के साथ–साथ कमीज़ का ऊपरी हिस्सा भी लाल हो गया था, उसकी उमर सात वर्ष थी, जबकि इक़बाल ने अभी पांचवां साल भी पूरा नहीं किया था.

'कहां है वह हरामी?'

'भाग गया.' दूसरे ने जवाब दिया.

उसी समय उन तीनों लड़कों के पीछे से आवाज़ उठी, 'पापा, मैं नहीं भागा. भाग कर यही तीनों शिकायत करने यहां आ गए.'

'मेरे सामने आ.'

इक़बाल उन तीनों को एक ओर कर सामने आया.

'तुम्हें बाहर खेलने के लिए भेजा था या लड़ाई करने के लिए?' मन–ही–मन बेचैन होते हुए हुसेन अली ने उसकी कलाई पकड़कर एक थप्पड़ रसीद किया, 'बोल, जवाब दे!'

वह ज़रा भी डिगा नहीं, बल्कि हिम्मत से बोला, 'मैं अकेला ही भंवरा फिरा रहा था. ये तीनों मेरे साथ खेलने आए. खेल में मेरे भंवरे ने अली के भंवरे को बीच से फाड़ दिया. फिर सब एक साथ मेरे ऊपर टूट पड़े.'

'तो तुम्हें उसकी नाक फोड़ डालने की...?' यह कहते हुए उसे दूसरा थप्पड़ जमाया, 'चल, अली से माफी मांग.'

'नहीं!' इक़बाल चिल्ला उठा. हुसेन अली ने उसे तीनों बच्चों के सामने धुन डाला.

'यह आपने ठीक नहीं किया.' रात को पत्नी ने नाराज़गी ज़ाहिर करते हुए कहा, 'बिना ग़लती के आपने लड़के को पीट डाला.'

'मैं जानता हूं, हमारे बेटे की कोई गलती नहीं थी.' उन्होंने स्वीकार किया, 'पर मैं यह भी नहीं चाहता कि वह अपनी समस्याओं का समाधान हिंसा में खोजे.'

'तीन लोग आपको घेर कर आप पर हमला करें, तो आप क्या करेंगे?' गुलबानु से खामोश नहीं रहा गया, 'हमारा बेटा महात्मा गांधी नहीं है, और जिस गली में हम रहते हैं, यहां हर रोज़ ज़िंदगी और मौत का खेल खेला जाता है. जिसकी लाठी उसकी भैंस. इस मुहल्ले में केवल घाघ लोग ज़िंदा रह सकते हैं और आप बेटे को बुजदिल बनाने की तालीम दे रहे हैं?'

पत्नी की बात में सच था, पर इस सच को कबूल करना हुसेन अली के लिए मुमकिन नहीं था. इक़बाल का भावी चित्र उनकी आंखों के सामने था. पढ़े–लिखे सुसंस्कृत, सभ्य समाज के सदस्य के रूप में और सभ्य समाज के लोग किसी का थोबड़ा नहीं रंगा करते.

इस कच्ची उमर में अगर उसे लगाम नहीं लगाई गई, तो कल वह हाथ में डंडा लेकर लड़ने जाएगा, किसी का सर फोड़ आएगा. आगे चल कर उसके हाथ में चाकू आ जाए, तो ताज्जुब की बात नहीं. कुछ सोचते हुए उन्होंने ज़मीन पर सोए इक़बाल की तरफ़ देखा.

'नहीं छोड़ूंगा...' वह नींद में बड़बड़ा रहा था, 'नहीं छोड़ूंगा! ढिशुम... नहीं छोड़ूंगा.'

जिन तीन लड़कों ने उसके पिता से शिकायत की थी, उनसे बैर निकालने का फ़ैसला इक़बाल ने कर लिया था. उसका अचेतन मन इस समय इसी को बार–बार दुहरा रहा था.

इस उमर में कुछ ऐसी प्रतिध्वनि मेरे भीतर भी उठ रही थी. पर किसी से बैर निकालने के लिए न मुझमें ताक़त थी, न इक़बाल जैसा कलेजा था.

2

मेरी मां को दो भय हमेशा सताया करते थे. एक, पानी का और दूसरा, कसरत का. उन्हें यक़ीन था कि कसरत करने से हड्डियां टूटती हैं और पानी में तैरने वाले बच्चे अक्सर डूब जाते हैं. ये भ्रम उनके मन में कैसे घर कर गए होंगे, यह मैं आज के दिन तक नहीं समझ पाया.

पर इतना ज़रूर समझ में आता है कि समुद्र से दूर रखने के लिए मां ने जितनी ज़्यादा कोशिशें कीं, सागर के प्रति मैं उतना ही अधिक आकर्षित होता गया. एक दिन सुबह तड़के अपने लंगोटिए दोस्तों के साथ चौपाटी पहुंचा. हम सभी ने अपने कपड़े उतार कर किनारे की रेत पर रखे और टपाटप पानी में कूद पड़े.

दोस्त लगभग एक घंटे में थक कर पानी से बाहर निकल गए. मैं आधा घंटे और रुका रहा. सामने से उछल–उछल कर आती लहरों में कूदने का लुत्फ़ ही कुछ और होता है. गहरे पानी में डुबकियां लगाने का अवसर भी मैं खोना नहीं चाहता था.

अंत में तैरते–तैरते किनारे पर आकर सूखी रेत में मैंने पैर रखे, और मेरे सिर पर मानो आसमान टूट पड़ा. मेरे दोस्त खुद तो चले ही गए, साथ में मेरी नेकर और कमीज़ भी लेते गए थे.

मेरी परेशानी की सीमा न रही. कपड़ों के बिना चौपाटी से डोंगरी कैसे पहुंचा जाए? कोई तरक़ीब लगा कर घर पहुंच भी जाऊं, तो मां को क्या जवाब दूंगा? मैं रो पड़ूं, इसके पहले कहीं से उड़ कर आता हुआ अख़बार अचानक मेरे सामने रुक गया. मेरी आंखें चमक उठीं. मैंने फ़ौरन उसे उठा लिया और तहमद की तरह कमर पर लपेट लिया.

एक समस्या क़रीब–क़रीब हल हो गई थी. अख़बार से मैं अपनी इज़्ज़त बचा कर सही–सलामत घर पहुंच सकता था. सावधानीपूर्वक क़दम रखते, दोनों हाथों से अख़बार की तहमद पकड़े मैं घर की ओर आगे बढ़ा, पर ज़्यादा दूर नहीं जा सका.

ऑपेरा हाउस थियेटर पहुंचते ही कहीं से एक आवारा कुत्ता आकर मेरे पीछे भौंकने लगा. मेरे हाथ से काग़ज़ की तहमद छूट गई. मैं भागा. कुत्ते के डर से दौड़ता–दौड़ता मैं सीधे डोंगरी आ पहुंचा. मेरे दोस्त मेरी राह देखते चौक के पास खड़े थे. मुझे नंगा देख कर किलकारियां मार कर हंस रहे थे. मेरे कपड़े दूर से दिखा कर मुझे खिझा रहे थे. मुझसे उनका यह सताना सहन नहीं हुआ. मैं सचमुच रो पड़ा. अंत में मुझ पर जैसे उपकार कर रहे हों, इस तरह मेरी आधी चड्डी और कमीज़ मेरे मुंह पर फेंक कर वे चले गए. मैं झुंझला कर रह गया.

इक़बाल की शरारतें दिन–ब–दिन बढ़ती जा रही थीं. स्कूल जाता, तो वहां भी वह चैन से नहीं बैठ सकता था. अभी तक उसने अली और उसके दोनों साथियों से बदला नहीं लिया था. ये तीनों बदमाश उसी के साथ हबीब हाईस्कूल में पढ़ते थे. इक़बाल मन ही मन उन तीनों को अपने शिकंजे में लेने का उपाय सोच रहा था और...

एक दिन रिसेस में उसे अवसर मिल गया. इक़बाल के क्लास के ही एक विद्यार्थी की पेंसिल उन्होंने छीन ली थी. इक़बाल छलांग मार कर उन तीनों के रास्ते में खड़ा हो गया.

'पेंसिल वापस दे दो.'

'तेरी नहीं है,' अली बोला.

इक़बाल ने चेतावनी दी. आसपास खेल रहे बच्चे दायरा बना कर खड़े हो गए.

(अगले अंक में जारी)

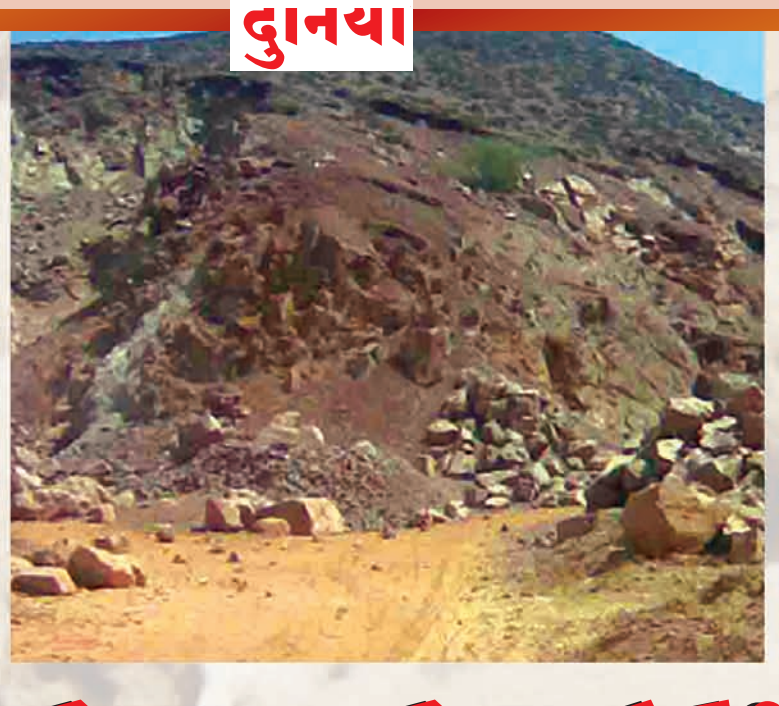

ग़ायब हो रहे हैं जंगल

राजस्थान के दरा में धड़ल्ले से जारी है अवैध खनन

राजस्थान के कोटा शहर से 50 किलोमीटर दूर है एनएच 12. यहीं से शुरू होता है दरा अभयारण्य. यह इलाक़ा 274 वर्गकिलोमीटर क्षेत्र में दो समानांतर पहाड़ियों के बीच फैला हुआ है. इस अभयारण्य की लंबाई क़रीब 80 किलोमीटर है. यह पहाड़ियां मध्यप्रदेश की सीमा तक फैली हैं. कभी वन्यजीवों से भरा जंगल प्रकृति का खजाना कहा जाता था. 1996 से पहले तक इन पहाड़ियों में कई जगह खनन विभाग ने लाल पत्थरों की लीज़ दे रखी थी, लेकिन 1996 में सुप्रीम कोर्ट के आदेश के बाद यहां की खानों को बंद करने के आदेश जारी कर दिए गए. हालांकि आज यहां के जंगल और पहाड़ियां इन आदेशों की कुछ अलग हक़ीक़त बयान करते हैं. एक छोटे से गांव दरा से शुरू होता यह जंगल कुछ क्षेत्रों में काफी घना है. बरसात के मौसम में पूरा अभयारण्य हरी चादर ओढ़ लेता है. स्थानीय लोग बताते हैं कि कभी मुख्य सड़क से अंदर घुसने पर ही वन्यजीवों का शोरगुल सुना जा सकता था. कुछ नहीं, तो बंदरों की उछल-कूद व चीतल-सांभर की आंख-मिचौली ज़रूर देखने को मिल जाती. आज इस उम्मीद से जाने वाले लोगों को निराशा ही हाथ लगती है. वन्यजीवों की आवाज़ के बजाए इसे टूटते पत्थरों की ठक-ठक और हथौड़ों की चोट ही सुनने को मिल सकती है. सरकारी काग़ज़ों में बारह साल पहले बंद कर दी गई खानों से अभी भी पत्थर निकालने का सिलसिला जारी है. यहां से न केवल पत्थर निकाले जाते हैं बल्कि इनका बड़े पैमाने पर व्यापार भी होता है. दरा अभयारण्य में बड़े पैमाने पर अवैध रूप से पत्थरों की खानें चल रही हैं. राष्ट्रीय राजमार्ग 12 से उतर कर जंगल में एक किलोमीटर चलने पर ही 30-40 फीट गहरी खानें नज़र आने लगेंगी. हर खान में 8-10 मज़दूर पत्थर तोड़ते दिखेंगे. अगर आप सतर्क न रहे, तो कभी भी पथराव हो सकता है, क्योंकि इन मज़दूरों को इस बात की ख़ास हिदायत होती है कि किसी अजनबी को खान तक न आने दें. सुबह को खान में उतरने वाला मज़दूर शाम से पहले बाहर नहीं निकलता. बीच-बीच में ठेकेदार आकस्मिक दौरा कर यह जांच करता रहता है कि मज़दूर काम कर रहे हैं या नहीं. क़रीब 12 घंटे पत्थर तोड़ने के बदले मज़दूरों को 80-100 रुपए रोज़ाना की मज़दूरी मिलती है. इस तरह की खानें कोटा से लेकर मध्यप्रदेश की सीमा तक फैली हैं.

इन खानों से निकलने वाला लाल पत्थर काफी क़ीमती होता है. यहां से निकलने वाले एक ट्रॉली पत्थर की कीमत 7-9 हज़ार रुपए होती है. यही पत्थर तराशने के बाद बाज़ार में 20 रुपए प्रति वर्गफुट की दर से बिकता है. पूरे अभयारण्य क्षेत्र से रोज़ाना ऐसी सैकड़ों ट्रॉलियां निकलती हैं. पत्थरों के इस लालच ने आदमी को ऐसा पत्थरदिल बना दिया है कि वह जंगल को खोखला करने पर तुल गया है.

पिछले कुछ सालों से दरा व आसपास के अन्य अभयारण्य में खनन माफियाओं का अघोषित कब्ज़ा है. इनके डर से वन-विभाग के रक्षक भी जंगलों में जाना बंद कर चुके हैं. कई बार ऐसी घटनाएं हो चुकी हैं, जिसमें खनन रोकने गए वनकर्मियों पर पथराव कर इन्हें भगा दिया गया. खनन माफिया अभयारण्य में खनन के बदले वन विभाग के नीचे से लेकर ऊपर तक के अधिकारियों को मोटी रक़म पहुंचाते हैं. दरा में तैनात वन-विभाग के एक क्षेत्रीय वन अधिकारी जयसिंह राठौड़ की भूमिका भी संदिग्ध रही है. क्षेत्रीय पत्रकार व जल बिरादरी से जुड़े बृजेश विजयवर्गीय बताते हैं कि इस अधिकारी के कार्यकाल में ही दरा अभयारण्य क्षेत्र में अवैध गतिविधियों को बढ़ावा मिला.

राजनीतिक रसूख वाले इस अधिकारी की पत्नी हाल के विधानसभा चुनावों में अजमेर के केकड़ी सीट से भाजपा की प्रत्याशी थी. अपनी राजनैतिक पहुंच का इस्तेमाल कर यह अधिकारी क़रीब 20 वर्षों से दरा व आसपास के रेंजों में तैनात रहा.

जंगल बचाने वाले जंगल खोद रहे हैं

दरा के जंगलों में चल रही खानों में काम करने वाले वही लोग हैं, जिनके पुरखों का जंगलों से पुराना नाता रहा है. अभयारण्य के आसपास के गांवों में ज़्यादातर गुर्जर व भील समुदाय के लोग रहते हैं. गुर्जर जाति मूलरूप से गोपालक जाति है, जिसका मुख्य पेशा पशुपालन है और भील लोगों के लिए जंगली उपज ही जीवन का आधार है. पिछले एक दशक से इन गांवों में बढ़े राजनैतिक हस्तक्षेप ने लोगों को विकास के नए सपने दिखाए. हालांकि चुनाव ख़त्म होते ही लोगों को हक़ीक़त का अहसास भी हो जाता. बाद में जब लोगों ने संगठित होकर रोज़गार की मांग की, तो नेताओं ने इनकी इस ज़रूरत को भी भुनाना शुरू कर दिया. रोज़गार मांगने वाले सभी लोगों को नेताओं ने बंद पड़ी खानों में पत्थर तोड़ने के काम में लगा दिया और खुद इन खानों के अघोषित मालिक बन बैठे. खनन से जुड़े यहां के गुर्जर समुदाय के लोगों को भाजपा के बागी गुर्जर नेता प्रहलाद गुंजल का राजनैतिक वरदहस्त भी प्राप्त रहा है. जबकि भीलों का कोई ऐसा नेता नहीं उभरा, जो इन्हें राजनैतिक संरक्षण प्रदान कर सके. ऐसे में गुर्जर बहुल गांवों के भील समुदाय के लोगों के सामने इन खानों में मज़दूरी के सिवा और कोई चारा नहीं बचा. बाद में जब राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गारंटी योजना आई, तो उसमें मिलने वाले काम पर भी गुर्जरों ने पहले हक़ जताना शुरू कर दिया. ऐसे में भील जाति के लोगों को नरेगा में भी काम मिलना मुश्किल हो गया. यही दर्द खान में काम करने वाले एक मज़दूर भैरू लाल की बातों में झलकता है. नरेगा के संबंध में पूछने पर भैरू कहते हैं कि 'नरेगा में गुर्जरों को काम मिलता है, हमारा काम तो पत्थर तोड़ना है.'

> **गैरसरकारी संस्था आदिवासी जनजाति अधिकार मंच के संरक्षक प्रताप लाल मीणा इसे प्रशासन की कमज़ोरी बताते हैं. वह कहते हैं कि 'सरकार सौ दिन के रोज़गार को सही ढंग से लागू नहीं करा पा रही, इसलिए लोग जंगलों की खुदाई कर रहे हैं.' हक़ीक़त भी कुछ ऐसी ही है. नरेगा के अंतर्गत लोगों को जितने दिन रोज़गार मिलता है, काम करते हैं, बाक़ी दिन जंगल ही इन्हें रोज़गार देता है.**

गैरसरकारी संस्था आदिवासी जनजाति अधिकार मंच के संरक्षक प्रताप लाल मीणा इसे प्रशासन की कमज़ोरी बताते हैं. वह कहते हैं कि 'सरकार सौ दिन के रोज़गार को सही ढंग से लागू नहीं करा पा रही, इसलिए लोग जंगलों की खुदाई कर रहे हैं.' हक़ीक़त भी कुछ ऐसी ही है. नरेगा के अंतर्गत लोगों को जितने दिन रोज़गार मिलता है, काम करते हैं, बाक़ी दिन जंगल ही इन्हें रोज़गार देता है. यहां के सभी लोगों को पता है 'जंगल खोदना अपराध है', लेकिन पेट के लिए वह अपराध भी करने को तैयार हैं. खानों में काम करने वाला बच्चा-बच्चा वन विभाग की 'फ्लाइंग स्कवॉड' या उड़नदस्तों को पहचानता है औरउनसे निपटना और पथराव कर खदेड़ देना भी अच्छी तरह से जानता है.

राष्ट्रीय अभयारण्य का प्रस्ताव

दरा अभयारण्य के इस काले अध्याय से पहले इसका सुनहरा इतिहास भी रहा है. इसकी सुंदरता और भविष्य में वन्यजीवों के लिए आवश्यकता को देखते हुए वन विभाग ने करीब 20 वर्ष पहले 1988 में ही राष्ट्रीय उद्यान बनाने का प्रस्ताव तैयार कर लिया था. इस प्रस्ताव में दरा अभयारण्य के अलावा इससे लगे जवाहर सागर अभयारण्य व राष्ट्रीय चंबल घड़ियाल अभयारण्य के कुछ हिस्से को लेकर करीब 469 वर्गकिलोमीटर क्षेत्रफल में इस उद्यान की कल्पना की गई. इन बीस वर्षों में राज्य में कई सरकारें आई और गईं. सभी ने उद्यान के नाम पर जम कर राजनीति की. इस दौरान चार बार इसका नाम बदला गया. 1989 में जब इसके प्रस्ताव को पूर्ण रूप दिया जा रहा था, उस समय जवाहर लाल नेहरू के जन्मशताब्दी वर्ष को देखते हुए इसे 'नेहरू जनशताब्दी राष्ट्रीय उद्यान' का नाम दिया गया. 1992 में भारत छोड़ो आंदोलन के स्वर्ण जयंती वर्ष के अवसर पर 'अगस्त क्रांति उद्यान' और 2003 में सोनिया गांधी ने उद्यान का हवाई दौरा किया, तो उस समय इसका नाम 'राजीव गांधी राष्ट्रीय उद्यान' प्रस्तावित कर दिया गया. अंतत: मार्च 2006 में वसुंधरा राजे सरकार ने 'मुकुंदरा हिल्स राष्ट्रीय उद्यान' के नाम से राष्ट्रीय पार्क बनाने की अधिसूचना जारी कर दी.

प्रस्ताव बनाने वाले वन संरक्षक विजय सालवान इसका नाम बार-बार बदले जाने का रोचक किस्सा बताते हैं. सालवान कहते हैं कि नाम बदलने का एकमात्र उद्देश्य होता है कि किसी तरह इस उद्यान को बनाने की मंजूरी मिल जाए. इसलिए जो सरकार इसमें थोड़ी भी रुचि दिखाती, हम इसी के अनुरूप इसका नाम बदल कर प्रस्ताव भेजते रहे हैं. हालांकि 2006 में अधिसूचना जारी होने के बाद भी इसके राष्ट्रीय उद्यान बनने का सपना पूरा नहीं हो सका है.

इसमें भी सबसे बड़ी बाधा इन जंगलों में चल रही अवैध गतिविधियां ही हैं. अवैध खनन के बदले अफसरों को मिलने वाली मोटी रक़म ने इनके हाथ बांध रखे हैं. कोटा के उपवन संरक्षक अनिल कपूर का कहना है, 'अभयारण्य क्षेत्र में तीन गांव आते हैं, जिनकी जनसंख्या हज़ारों में है, को वहां से हटा कर दूसरी जगह बसाना है. इसके लिए सर्वे कर लिया गया है.' दरा से विशेष लगाव रखने वाले सालवान का मानना है कि इस मुद्दे पर चाहे जितनी राजनीति कर ली जाए, ज़रूरत इसकी है कि इसे तुरंत राष्ट्रीय उद्यान का दर्जा मिले, ताकि जंगल से जीवों के अस्तित्व को मिटने से बचाया जा सके.'

लुप्त हो गए वन्यजीव

जंगल में भारी पैमाने पर हो रहे अवैध खनन ने न केवल जंगलों को नष्ट किया है, बल्कि यहां के वन्यजीवों के वजूद पर भी ख़तरा मंडराने लगा है. पिछले दो दशक में बढ़े मानवीय हस्तक्षेप ने जंगल से कई जंगली जीवों के अस्तित्व को मिटा दिया है. कोटा के सेवानिवृत्त मंडल वन अधिकारी एच वी भाटिया बताते हैं कि 1980 तक दरा में बाघों का दिखना आम बात होती थी, लेकिन अब यहां एक भी बाघ नहीं बचा है. लगातार शिकार व खनन के चलते तेंदुआ भी गिने-चुने ही बचे हैं. यह हक़ीक़त वन विभाग के ही पिछले कुछ सालों के वन्यजीव गणना के आंकड़े स्पष्ट करते हैं. इन आंकड़ों पर नज़र डालें, तो एक भयावह सच्चाई सामने दिखती है.

1996 तक दरा अभयारण्य में 39 पैंथर हुआ करते थे. 12 साल बाद 2007 में हुए वन्यजीव गणना में इनकी संख्या घट कर 7 रह गई. इसी तरह 1996 में इस अभयारण्य में 725 चीतल, 281 सांभर, 121 चिंकारा, 2926 मोर, 2100 जंगली सूअर, 88 लोमड़ी और 584 नीलगाय थीं. 2007 में हुई वन्यजीव गणना में क्रमश: 107 चीतल, 49 सांभर, 92 चिंकारा, 955 मोर, 302 जंगली सूअर व 58 लोमड़ी ही बची हैं. दरा से लगे जवाहर सागर अभयारण्य के हालात भी कुछ ऐसे ही हैं. सवाल उठता है कि 12 साल में बढ़ने के बजाए एक तिहाई वन्यजीव कम कैसे हो गए. जब इस अभयारण्य से वन्यजीव गायब हो रहे थे, तो क्या वन विभाग के अधिकारी सो रहे थे? जवाब में राज्य के मुख्य वन्यजीव प्रतिपालक आरके मेहरोत्रा कहते हैं, 'जंगलों की अंधाधुंध कटाई और बढ़ी चराई ने वन्यजीवों पर गहरा प्रभाव डाला है. इसके चलते वन्यजीवों के चारे ख़त्म हो रहे हैं और इनकी संख्या घट रही है.' सेवानिवृत्त वन संरक्षक विजय कुमार सालवान इसे आधी-अधूरी सच्चाई बताते हैं. सालवान कहते हैं, 'यह हालात केवल अवैध चराई से नहीं बल्कि बरसों से भारी पैमाने पर हो रहे अवैध खनन, पेड़ों की कटाई व मानवीय हस्तक्षेप ने पैदा किए हैं. इसके लिए वन विभाग भी इतना ही दोषी है, जितना कि अवैध खनन करने वाले माफिया.'

बीहड़ों में बालश्रम

दरा अभयारण्य व आसपास के जंगलों की छाती पर चल रहे हथौड़े केवल धरती का सीना छलनी नहीं कर रहे, बल्कि वह उन फूलों को भी रौंद रहे हैं, जो अभी ठीक से खिल भी नहीं पाए हैं. मौत से गहरी इन खाइयों में काम करने वाले बच्चे ऐसे ही फूल हैं, जिनके लिए सारी दुनिया इन जंगलों व खानों की गहराइयों तक सिमट कर रह गई है. अभयारण्य क्षेत्र में चल रही हर खान में 10-12 साल के बच्चे पत्थर तोड़ते मिल जाएंगे. बच्चों से यहां पत्थर तोड़ने व इनकी ढुलाई का काम लिया जाता है. ऐसी ख़तरनाक परिस्थितियों में काम करने के संबंध में पूछने पर 12 साल की प्रेमा सीधी-सी बात कहती हैं, 'जंगल से बाहर दूसरा कोई काम नहीं मिलता.' शिक्षा-स्वास्थ्य की मूलभूत आवश्यकताओं से दूर इन बच्चों तक सरकारी सहायता की कोई किरण नहीं पहुंच सकी है. शिक्षा के संबंध में एक मज़दूर पिता मांगीलाल गुर्जर से पूछने पर वह भोलेपन से कहते हैं, 'गुर्जर के बच्चे भी पढ़ते हैं क्या?'

2006 में केंद्र सरकार ने 'बालश्रम: सुरक्षा व विनियम अधिनियम, 1986' में कुछ महत्वपूर्ण संशोधन कर इसे और कड़ा बनाया था. इसमें होटलों, ढाबों, घरों, फैक्ट्रियों व अन्य ख़तरनाक परिस्थितयों में बच्चों से काम लेने पर कड़ी सज़ा का प्रावधान किया गया. इस क़ानून के लागू होने के दो साल बाद भी इसकी परछाईं दरा अभयारण्य के बीहड़ों में चल रहे इन अवैध खानों तक नहीं पहुंच सकी है. अवैध खान होने के कारण बालश्रम पर रोकथाम करने वाली सरकारी एजेंसियां भी इसे अपने अधिकार क्षेत्र से बाहर का बता अपना पल्ला झाड़ लेती हैं. अब इन बाल मज़दूरों को इंतज़ार है, तो बस अगली सुबह और अगली रोटी का.

विजय

feedback.chauthiduniya@gmail.com

राशिफल

(12 अप्रैल से 18 अप्रैल तक)

मेष
21 मार्च से 20 अप्रैल

इस सप्ताह आपको भविष्य की चिंता हो सकती है. ऐसे में आपके लिए आवश्यक है कि आप धैर्य से काम लें और अपनी क्षमताओं और कमज़ोरियों को जान कर धीरे-धीरे आगे बढ़ें. हालांकि शुरुआत में आपको कुछ उतार-चढ़ाव देखने को मिलेंगे, पर समय के साथ आप विकास की ओर बढ़ेंगे. शुरू में आपको कुछ नुक़सान झेलना पड़ सकता है, लेकिन परिस्थितियां समय के साथ आपके अनुकुल हो जाएंगी. याद रहे कि परेशानियों पर ज़्यादा ध्यान देने से आपकी क्षमताओं पर असर पड़ सकता है. ऐसी स्थिति में सलाह यह है कि सोच-समझ कर शांतिपूर्वक अपना कार्य करें. व्यवसाय संबंधी मामलों में संगठित प्रयासों से लाभ पाने के लिए आगे बढ़ें.

वृष
21 अप्रैल से 20 मई

आपमें से कई ऐसी चीज़ों से प्रभावित होंगे, जो आपको जीवन में आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करेंगी. ऐसे में आपके लिए ज़रूरी है कि आप अपनी भाव-नाओं से नहीं बल्कि विवेक से काम लें. अब समय है कि आप अपने आधिकारिक सौभाग्य को स्वीकारें. फिर आप देखेंगे कि सही या ग़लत आपके भाग्य पर ही निर्भर करेगा. जो चीज़ें आपके हाथ से निकल रही थी, उन पर आप पकड़ बना लेंगे. इस सप्ताह आपका किसी प्रभावशाली व्यक्ति से संपर्क होने की वजह से अटका हुआ काम भी अपनी गति पकड़ लेगा. आपको ज़रूरत है कि अपने बजटिंग के तरीक़ों में बदलाव लाएं और व्यवसाय में लाभ बढ़ाने के लिए नई तकनीक का प्रयोग करें.

मिथुन
21 मई से 20 जून

यह सप्ताह आपके लिए फायदेमंद साबित होगा. एक ओर चीज़ें आपके नियंत्रण में आएंगी, वहीं दूसरी ओर आपके विकास की गति में तेजी आएगी. आपके दिमाग़ में जहां नए विचार आएंगे, वहीं चुनौतियों का सामना भी करना पड़ सकता है. आपके आसपास घट रही घटनाओं के बारे में कुछ समय तक सही या ग़लत का चुनाव करना मुश्किल होगा, लेकिन बाद में आप अपनी दिशा को पाने में सफल हो जाएंगे. दूसरे शब्दों में आप अपना विस्तार तो करेंगे ही, साथ ही अपना काम एक स्थायी तरीके से जमाएंगे भी. व्यवसाय के लिए सप्ताह कुल मिलाकर अच्छा रहेगा तथा नए अवसर लेकर आएगा, जिनसे आपको निश्चय ही फायदा होगा.

कर्क
21 जून से 20 जुलाई

लाभकारी तत्वों को शामिल करने से इस सप्ताह आप बढ़िया लाभ पाएंगे. उभरते हालात के बारे में आपकी गहरी और व्यापक जानकारी एवं क्रियात्मक विचारों का इस्तेमाल आपका सही दिशा-निर्देश करेगा. आप अपने पुराने गणितीय अंदाज़ में ही अपने लक्ष्य को पाने के लिए कुछ बेहतरीन योजना बनाएंगे. हालांकि आप एक सार्वजनिक भूमिका शानदार तरीके से निभाएंगे, पर आपका एक हिस्सा उसी कदर भावनात्मक होगा और आप चाहेंगे कि आप कुछ पुराने व्यक्तिगत मसलों और मुद्दों को सुलझा सकें, जिनके जवाब आपको अब तक नहीं मिले हैं. व्यावसायिक मसलों में आप अपनी स्थिति को मज़बूत करने में सफल रहेंगे.

सिंह
21 जुलाई से 20 अगस्त

इस सप्ताह आप नई नई संभावनाओं पर कार्य करने के बारे में सोचेंगे. सभी विकल्पों पर विचार करने के बाद आप जल्द ही एक नई शुरुआत करेंगे. यह सही भी है, क्योंकि आप ऐसी स्थिति में हैं कि अगर आप धैर्य से काम लेंगे तो किसी भी कार्य को अपनी ओर खींचने में सफल हो जाएंगे. आपका आत्मविश्वास आपको नई दिशाएं ढूढ़ने में मदद करेगा, जिसके चलते आप अपने करियर में अलग पहचान बनाने में सफल होंगे. अपने विचारों की दृढ़ता से आप अपने सामने आने वाली हर परिस्थित का सामना समझदारी से कर पाएंगे. हालांकि आप अपने अभी के करियर से संतुष्ट होंगे, परंतु यह समय आपके लिए भविष्य की योजना बनाने का भी है. यदि आप नौकरीपेशा हैं या व्यवसाय के क्षेत्र में हैं, तो आप अवश्य ही अपनी आमदनी बढ़ाने में सफल होंगे.

कन्या
21 अगस्त से 20 सितंबर

इस सप्ताह आपके दिमाग़ में कई नए विचार जन्म लेंगे, जिसके चलते आप नई रणनीति बनाएंगे. हालांकि खुशी की बात तो यह है कि आप चाहे कोई भी काम करें, आपको सफलता अवश्य मिलेगी. आपके काम करने की लगन और अनुकूल परिस्थतियां आपको अवश्य ही इच्छित परिणाम देंगी. एक बार जब आप नए विचारों की ओर बढेंगे, तो आपको यह ध्यान रखना होगा कि आप हमेशा अपनी बात को औरों से ऊपर रख पाएं और चीज़ों में अपना नफा-नुक़सान देख पाएं. हालांकि आपको चीज़ें शायद ऊपरी तौर पर काफी शांत लगें, पर वास्तविकता कुछ और ही होगी, इसीलिए आपको इनके पीछे की सच्चाई के लिए हमेशा तैयार रहना होगा. व्यावसायिक और आर्थिक क्षेत्र में यदि सोच-समझ कर फ़ैसले लेंगे, तो आपको निश्चित ही फ़ायदा होगा.

तुला
21 सितंबर से 20 अक्तूबर

यह सप्ताह आपके मन-मुताबिक रहेगा. तुला राशि वाले कई छोटी-मोटी शुरुआत पा लेंगे और इसी में एक प्रभावी व्यक्ति का साथ भी शामिल है, जो आम राय और तार्किक रूढ़ियों के बावजूद आपके पक्ष में जाएगा. यह ख़ास तौर पर उस वक्त लागू होगा, जब आप मीडिया या द्विपक्षीय संबंधों के क्षेत्र में काम करते हों. आपके नए विचारों से कई प्रमुख लोग प्रभावित होंगे. हालांकि, अतिआत्मविश्वास से बचने की ज़रूरत है. याद रखिए कि गर्मजोशी का फ़ायदा केवल कुछ देर के लिए होता है, यह बाद में आलस्य या लापरवाही में भी बदल सकता है. इसीलिए, अपने तात्कालिक लक्ष्य को पाकर आपको इसके दूसरे पक्ष को भी ध्यान में रख अपनी प्रतिभा का उपयोग करना चाहिए. व्यवसायी मामलों में कोई भी क़दम उठाने से पहले अपने किसी विश्वासी की सलाह ज़रूर लें.

वृश्चिक
21 अक्तूबर से 20 नवंबर

यह सप्ताह आपके लिए नए अनुभवों से लाभ पाने का रहेगा. हालांकि इसमें भी एक शर्त हागी – इसके लिए आपको पूरी जान लगा देनी होगी, तभी कोई परिणाम हासिल होगा. याद रखिए कि आपकी चुनौतियों का सामना करने की क्षमता और चीज़ों की ज़िम्मेदारी लेने का साहस ही आपकी सबसे बड़ी पूंजी है. ऐसे में आपकी थोड़ी-सी लापरवाही आपको काफी नुक़सान पहुंचा सकती है. ऐसा न हो, इससे बचने के लिए स्वयं में थोड़ा बदलाव लाना आपके लिए अनिवार्य है. आपके लिए यह ज़रूरी है कि आप अपना ध्यान एक ही ओर केंद्रित रखें और अपने आपको भटकने न दें. ख़ास तौर पर उन चीज़ों पर ध्यान न करें, जिनकी दिशा निश्चित नहीं है. व्यवसाय के क्षेत्र में आप चीज़ों को ठीक तरह से परख कर उनका सदुपयोग कर पाएंगे.

धनु
21 नवंबर से 20 दिसंबर

इस सप्ताह आपकी जीत का मूल मंत्र केवल एक ही होगा, 'शांत रहना और हर तरह की परिस्थितियों में संयम बनाए रखना.' चाहे कुछ भी हो जाए, चाहे कोई कुछ भी कहे पर आपको शांत रहना होगा. हर मुश्किल के हल के लिए आपको अपने ऊपर संयम बनाए रखना पड़ेगा. समय के साथ आपके काम की गति में भी अवश्य ही सुधार आएगा. यदि आप चीज़ों पर अधिक सोचना छोड़ कर अपने बचाव के लिए कोई ठोस क़दम उठाएंगे. इस प्रक्रिया में आपकी अनदेखी चुनौतियों का सामना करने की प्रतिभा और भविष्य के लिए ज़रूरी योजनाएं बनाने की क़ाबिलियत आपका बहुत साथ देगी. हालांकि आप अपना काम पूरी कुशलता से कर रहे हैं, पर अब आपकी इच्छा कार्यक्षेत्र में आगे बढ़ने की होगी, जिसके चलते आप कार्य में नई योजनाओं का निर्माण करेंगे. ऐसे में आवश्यक है कि आप अपने बड़ों की सहमति अवश्य लें. व्यवसाय में यदि आप भविष्य को ध्यान में रख कर कार्य करेंगे, तो सफलता अवश्य मिलेगी. आपके लिए इस समय यह ज़रूरी है कि आप भविष्य को ध्यान में रखते हुए ही सभी महत्वपूर्ण योजनाएं बनाएं.

मकर
21 दिसंबर से 20 जनवरी

यह सप्ताह आपके लिए सृजनात्मक विचारों का है, जिसके चलते आपको कई नए अवसर मिलेंगे. आप अपने कार्यक्षेत्र में अलग छाप बनाएंगे. वास्तव में तो आप में से कई लोग अनेक प्रभावशाली व्यक्तियों को उनके दिशा-निर्देश में सहयोग करेंगे. इतना सब होने के बाद भी शायद आप अपने आस-पास के लोगों के अजीब व्यवहार से असंतुष्ट महसूस करेंगे, पर जल्द ही ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न होंगी, जिससे आपमें नया आत्मविश्वास उत्पन्न होगा और आप चीज़ों को बेहतर नज़रिए से देख पाएंगे. इस पूरी प्रकिया में आपको यह भी आभास होगा कि आप चाहें, तो चीज़ों को अपने अनुकूल ढाल सकते हैं और अपनी दिशाएं स्वयं निर्धारित कर सकते हैं. व्यवसाय के लिए यह एक बढ़िया समय है. आप कई नए समझौते कर सकते हैं और चाहें तो नए क्षेत्रों में अपना भाग्य भी आजमा सकते हैं. इससे भविष्य में आपको अवश्य ही लाभ होगा. ख़ास तौर पर यदि आप कंप्यूटर या किसी तकनीक संबंधी व्यवसाय में प्रयास करेंगे, तो आपको इच्छित फल ज़रूर मिलेगा.

कुंभ
21 जनवरी से 20 फरवरी

आम तौर पर कई तरह से प्रयोग करना और एक से अधिक विकल्प या विचारों से खेलना एक अच्छा विचार हो सकता है. इस सप्ताह, हालांकि पेशेवर और व्यावसायिक दोनों ही मोर्चों पर एक दृष्टिकोण से काम करना और पूरी तरह केंद्रित होना आपके लिए लाभकर होगा, न कि अपनी ऊर्जा को बिखेरना. नतीजे के तौर पर, जल्द ही आप अधिक तेजी और बिना बाधा के चीज़ों को अपने तरीके से कर पाएंगे, और यही बहुत कुछ कहता है. नहीं. यही समय है कि आप खीझ पैदा करने वाले लोगों को किनारे करें और लोगों से अपने व्यवहार में कुछ मर्यादाएं स्थापित करें. खासकर, अधिकारियों से. ऐसा करने से आप देखेंगे कि जल्द ही आपके प्रति लोगों के व्यवहार में सकारात्मक बदलाव आएगा. खुशी की बात यह है कि जब आप विभिन्न गतिविधियों और नए कारकों के साथ काम करते रहेंगे, तब भी काफी समय होगा, जब आप खुद से और अपने काम से प्रसन्न रहेंगे. खासकर पेशेवर और व्यक्तिगत स्तर पर. व्यावसायिक और वित्तीय तौर पर, आपके कुछ कोष का पुनर्निवेश आपको लाभ पहुंचाएगा.

मीन
21 फरवरी से 20 मार्च

पेशेवर तौर पर, उन विचारों का नवीनीकरण, जो पहले नहीं चले और उनको एक अलग संदर्भ में इस्तेमाल करना इस सप्ताह लाभ पहुंचाएगा. इसका मतलब यह कतई नहीं है कि आपको कुछ भी नया नहीं करना या सोचना चाहिए. यह तो केवल ऐसा है कि तेज नतीजे पाने के लिए आपको अपनी जड़ों की ओर लौटना चाहिए या वही कुछ करना चाहिए, जिसमें आपकी पहले से गति है. पूरी तरह नया कुछ भी करने के लिए आपको अधिक समय की दरकार होगी, जो आपको अधीर बनाएगा. मजे की बात यह है कि नए उद्यमों में आपके काम की मात्रा उतना मायने नहीं रखेगी, बल्कि जो कुछ पहले से है, उसी को अपने हक़ में इस्तेमाल करने से आपको अधिकतम लाभ मिलेगा. इसीलिए, याद रखें कि पेशेवर और व्यावसायिक मामलों में एक नया मोड़, ताज़ा घुमाव और नए आयामों को जोड़ने से आपको बढ़िया लाभ मिलेगा. व्यावसायिक और वित्तीय मामलों में हमेशा यह ध्यान रखें कि एक हद तक ज़ोखिम उठाना और नए क्षेत्रों में प्रवेश करना लाभकारी रहेगा.

बैसाखी

बैसाखी पंजाबियों का सबसे बड़ा त्योहार है. इस दिन ये लोग रंग और जंग दोनों में रहते हैं. यह त्योहार दुनिया भर में पंजाबियों का कौमी जश्न है. इसका नाम लेते ही उनका शरीर थिरकने लगता है और भांगड़ा शुरू हो जाता है. भांगड़ा नाचने वाले धरती-आकाश की दूरियां ख़त्म कर देते हैं. पंजाब और हरियाणा के किसान सर्दियों की फसल काट लेने के बाद नए साल की खुशियां मनाते हैं. बैसाखी किसान का घर भी फसल से भर देती है. किसान का मन खड़ी फसल को देख कर नाचने लगता है. गेहूं को कनक माने सोना भी कहते हैं और यह फसल किसान के लिए सोना ही है. बैसाखी पर कनक की कटाई शुरू हो जाती है. यह रबी की फसल के पकने की खुशी का प्रतीक है. बैसाखी के अवसर पर देश भर में विशेष तौर पर पंजाब में मेले लगते हैं. लोग सरोवरों व नदियों में स्नान करते हैं और मंदिरों व गुरुद्वारों में शीश नवाते हैं. इस दिन पंजाब का परंपरागत नृत्य भांगड़ा और गिद्दा किया जाता है.

दिन भर गुरु गोंविद सिंह और पंज प्यारों के सम्मान में शब्द और कीर्तन गाए जाते हैं. पूरे देश में श्रद्धालु गुरुद्वारों में अरदास के लिए इकट्ठे होते हैं. मुख्य समारोह आनंदपुर साहिब में होता है, जहां पंथ की नींव रखी गई थी. दूध और जल से प्रतीकात्मक स्नान करवाने के बाद गुरु गंथ्र साहिब को तख्त पर बैठाया जाता है. इसके बाद पंच प्यारे पंचबानी गाते हैं. दिन में प्रसाद लेने के बाद सभी लोग गुरु के लंगर में शामिल होते हैं. शाम को आग के आसपास इकट्ठे होकर लोग नई फसल की खुशियां मनाते हैं. केरल में यह त्योहार विशु कहलाता है. इस दिन नए कपड़े खरीदे जाते हैं. आतिशबाजी होती है और विशु कानी सजाई जाती है. इसमें फूल, फल, अनाज, वस्त्र, सोना आदि सजाए जाते हैं और सुबह जल्दी दर्शन किए जाते हैं. दर्शन के साथ नए वर्ष में सुख-समृद्धि की कामना की जाती है. हिंदू भी इसे स्नान, भोग लगा कर और पूजा करके मनाते हैं. ऐसा माना जाता है कि हज़ारों साल पहले देवी गंगा इसी दिन धरती पर उतरी थीं. उन्हीं के सम्मान में हिंदू धर्मावलंबी पारंपरिक पवित्र स्नान के लिए गंगा किनारे एकत्र होते हैं. जीवन में खुशहाली और संपन्नता के लिए लोग ईश्वर से प्रार्थना करने के लिए इस अवसर को शुभ मानते हैं. बैसाखी का त्योहार बलिदान का त्योहार है.

बैसाखी का त्यौहार सिखों के लिए बड़े महत्व और श्रद्धा का है. इस पर्व का नाम वैशाख से बना है. 13 अप्रैल 1699 को दसवें गुरु गोंविद सिंह जी ने खालसा पंथ की स्थापना की थी. इसी की याद में बैसाखी का त्योहार मनाया जाता है. खालसा पंथ का उद्देश्य था, धर्म व नेकी के आदर्श के लिए सदैव तत्पर रहना. समाज से असमानता तथा जुल्म को मिटाना. गोविंद सिंह जी ने अत्याचार और अन्याय के ख़िलाफ़ लगातार संघर्ष किया था. सिख इस त्योहार को सामूहिक जन्मदिवस के रूप में मनाते हैं.

गुड फ्राइडे

ईसाइयों के लिए ईसा का बलिदान उनकी आस्था का मूल आधार है और इसी पर ईसाइयत की नींव रखी गई है. ईसा के पुनरुत्थान के तीन दिन पूर्व पड़ने वाला शुक्रवार गुड फ्राइडे के रूप में मनाया जाता है. इस दिन भक्तगण उपवास के साथ प्रार्थना और मनन करते हैं. चर्च और घरों से सजावट की वस्तुएं हटा ली जाती हैं या उन्हें बैंगनी रंग के कपड़े से ढंक दिया जाता है. गुड फ्राइडे की तैयारी प्रार्थना और उपवास के रूप में 40 दिन पहले ही प्रांरभ हो जाती है. इस दौरान शाकाहारी व सात्विक भोजन पर ज़ोर दिया जाता है. गुड फ्राइडे के दिन ईसा के अंतिम सात वाक्यों की विशेष व्याख्या की जाती है, जो क्षमा, मेल-मिलाप, सहायता और त्याग पर केंद्रित हैं.

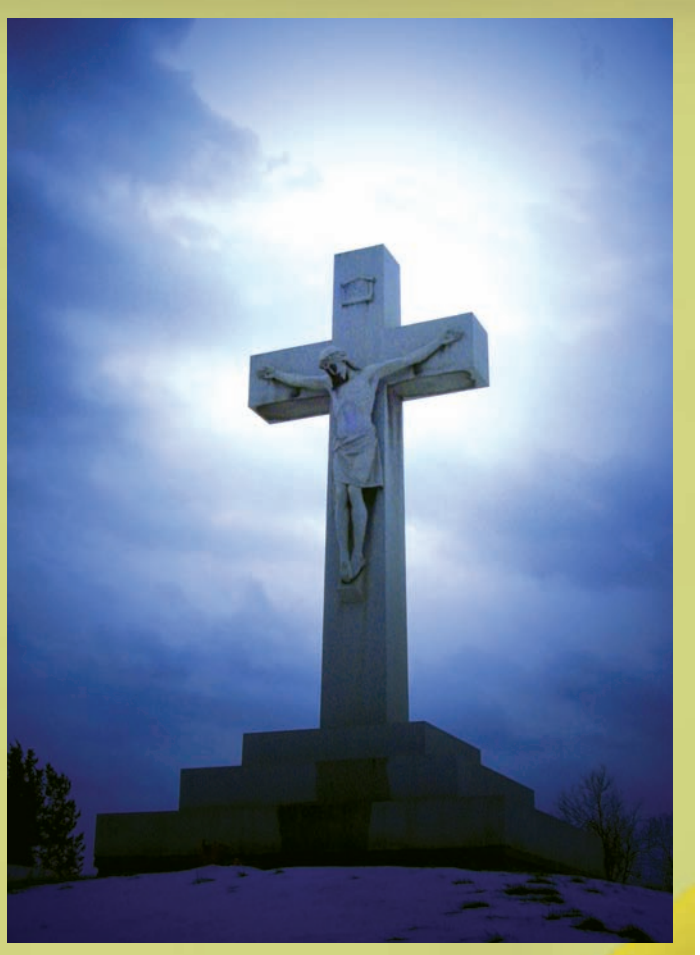

ईसा कहते हैं, विनम्रता और सत्य से अपना मार्ग प्रशस्त करो. हिंसा के मूल में लोगों का अज्ञान, बेरोज़गारी और गरीबी ही है. इसका समाधान मानवीय गरिमा में छुपा है. धैर्य और आध्यात्मिक ऊर्जा, जो क्षमा से पैदा होती है, वही मानव को सही मार्ग दिखा सकती है. ईसा ने मनन और प्रार्थना की राह दिखाई. सांप्रदायिक तनाव और विभिन्न पंथों के अलगाव के दौर में गुड फ्राइडे के संदेश पर और गौर करने की आवश्यकता बताई. ईसा ने कहा था अपने शत्रुओं से प्रेम करो. जो तुमसे बैर करते हैं, उनको आर्शीवाद दो. जो तुम्हारे साथ दुर्व्यवहार करते हैं, उनके लिए प्रार्थना करो. बाइबिल में उल्लेख है कि एक विद्वान ने ईसा से पूछा, गुरुवर उन्नत जीवन प्राप्त करने के लिए मुझे क्या करना होगा. ईसा ने उससे कहा, ईश्वर को अपने हृदय, आत्मा और सारी शक्ति से प्यार करो और अपने पड़ोसी को अपने समान प्यार करो. गुड फ्राइडे के दिन ईसा ने मानव मुक्ति के लिए जान दे दी थी.

दुनिया

मोटोरोला का एचटी 820 स्टीरियो हेडफोन

मोटोरोला ने अपना एचटी 820 स्टीरियो मार्केट में लांच कर दिया है. मोटोरोला का यह हेडफोन आम हेडफोन की तरह नहीं है. इस हेड फोन की सबसे बड़ी खासियत है, इसका ब्लटूथ से लैस होना. ब्लूटूथ दरअसल एक ऐसा डिवायस है, जिसके जरिए हम किसी भी ब्लूटूथ वाले फोन से गानां, फोटो या फाइल ट्रांसफर कर सकते हैं.

ब्लूटूथ कनेक्टिविटी वाले इस हेडफोन से गाने सुनते वक्त बीच में कभी फोन पर भी बात कर सकते हैं. और स्वयं फोन लगा भी सकते हैं. ब्लूटूथ होने के कारण बार-बार सेलफोन ऑपरेट करने की जरूरत भी नहीं पडेगी.हाई क्वालिटी ऑडियो वाला यह स्टीरियो हेडफोन विभिन्न ब्लूटूथ एनेबल मोबाइल फोन में लगाया जा सकता है.

हर इयरपॉड में मौजूद 30 मिलीमीटर का ड्राइवर इसे बेहतरीन म्यूजिक देने में सक्षम बनाता है.हेडफोन में लगी लीथियम बैटरी 17 घंटे का टॉक टाइम, 12 घंटे का म्यूजिक प्लेबैक और 500 घंटे का स्टैंड बाय टाइम देती है.इस हेडफोन का वजन मात्र 100 ग्राम है.इसके सॉफ्ट कुशन एवं फ्लेक्सिबल नेकबैंड इसके इस्तेमाल को और भी सुविधाजनक बनाते हैं.

4000 रुपये में उपलब्ध इस बेहतरीन हडफोन के साथ ही मोटोरोलो आपको देता है एक साल की वारंटी,एक कैरी पाउच और एक स्टारट गाइडट.

इस तरह की डिवाइस के मार्केट मे आ जाने से कालेज के छात्रों के लिए स्टेटस सिम्बल तो बढा ही जाता हैं साथ ही साथ वाहन चालकों को भी एक सुविधाजनक यंत्र मिल गया है.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback.chauthiduniya@gmail.com

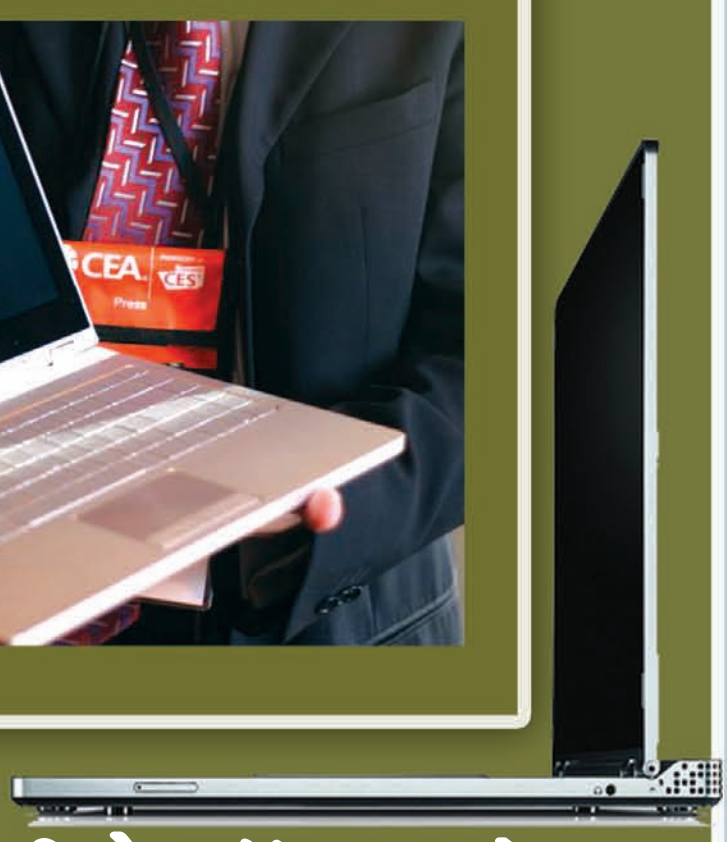

लांच हुआ हाई-फाई लैपटॉप एडमो

यूं ही जिससे प्यार हो जाए...हम यहां किसी गाने की नहीं लैपटॉप की बात कर रहे हैं. डेल ने नए लैपटॉप एडमो को हाल ही में लांच किया है. एडमो का अर्थ है जिससे प्रेम हो जाए. कंपनी का मानना है कि एडमो विश्व का अबतक का सबसे पतला लैपटॉप है. इस लिहाज से एडमो एप्पल के एअर लैपटॉप को तगड़ी टक्कर दे रहा है, एप्पल की इस लैपटॉप की चौड़ाई जहां 0.76 इंच है. वहीं एडमो की चौडाई मात्र 0.65 इंच है.अल्यूमीनियम की बॉडी वाले एडमो की स्क्रीन 13.4 इंच चौड़ी है, और इसकी स्टोरेज मेमोरी 12 जीबी है. इसकी कीमत 1,999 डॉलर से शुरू होती है.नई तकनीक और लेटेस्ट गिज़्मोज के दीवाने युवाओं को ज़रूर ही यह लैपटॉप लुभाने वाला है.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback.chauthiduniya@gmail.com

सैमसंग का एमपीथ्री प्लेयर

आ जा झूम लें, हम फिर एक बार

सैमसंग का अनोखा एमपीथ्री प्लेयर (पी थ्री) मार्केट में आ गया है, इस अनोखे एमपीथ्री प्लेयर की खास बात है कि इसमें आप गाने-सुनने के साथ फोन पर बात भी कर पाएंगे. इस प्लेयर को यदि ब्लूटुथ वाले फोन के साथ जोड़ा जाए तो किसी भी फोन पर आसानी से बात की जा सकती है. तीन इंच के डब्ल्यू क्यू वी जी ए टीएफटी एलसीडी टच स्क्रीन वाले इस प्लेयर की वीडियो स्क्रीन यानी आस्पेक्ट रेशियो 16:9 है. मार्केट में काले और सिल्वर रंग में आई पी थ्री की कीमत 11,900 और 14,900 रुपए है. 11,900 वाले प्लेयर की स्टोरेज क्षमता आठ जीबी एवं 14,900 वाले प्लेयर 16 जीबी की है. पी3 में ऑडियो प्लेयर के साथ वायस रिकॉर्ड, फोटो एल्बम व्यूअर और एफएम रेडियो भी मौजूद है.

यादों को सहेजने का बेहतरीन तरीका

जीवन के बेहतरीन लम्हों को संजोने के लिए फोटो सबसे खूबसूरत चीज़ होती है. फोटो के साथ यदि डिजिटल फोटो फ्रेम में अन्य खूबियां भी हों, तो क्या बात है. ट्रांसेंड कंपनी ने पीएफ-810 फोटो फ्रेम हाल ही में लांच किया है. लेड-लाइट और सेंसिटिव मेन्यू इंफ्रास्ट्रक्चर वाले इस फ्रेम में आठ इंच का रंगीन टीएफटी एलसीडी पैनल डिस्प्ले है. इसमें दो जीबी की फ्लैश मेमोरी के साथ ही मल्टीमीडिया प्लेबैक कैपेबिलिटी, अलार्म एवं एफएम रेडियो जैसी सुविधाएं भी हैं. किसी काम की याद दिलाने के लिए तो इसमें इलेक्ट्रॉनिक कैलेंडर के साथ रिमाइंडर लगाने का भी सिस्टम है. इसके साथ ही इसमें सबसे चौंकाने वाली बात तो यह है कि इस फ्रेम में हम फिल्म और वीडियो भी देख सकते हैं. पीएफ-810 में यूज़र जेपेग और बीएमपी दोनों फॉरमेट में पिक्चर देखी जा सकती है. ट्रांसेंड के इस नए आविष्कार की एओएस तकनीक इसे फोटो को ऑटोमेटिक एडजस्ट करने में मदद करती है.

तेरह भाषाओं को समझने वाले इस फ्रेम की खासियत है कि इसमें यूएसबी कनेक्टर है, जिससे इसमें कोई भी डाटा स्टोर कर कंप्यूटर में आसानी से ट्रांसफर किया जा सकता है. 540 ग्राम के इस फ्रेम के पैनल की गारंटी एक साल और इसके अन्य यंत्र की गारंटी दो साल की है. मात्र 99,00 रुपए का यंत्र मार्केट में रेडिंटन, मीडियामेन एवं सुपरटन टेक्नॉलॉजी पर उपलब्ध है.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback.chauthiduniya@gmail.com

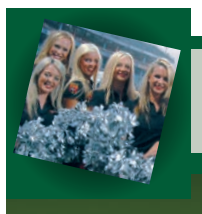

सुरक्षा की क़ीमत पर अरबों का तमाशा

पहले से ही काम के बोझ से परेशान पुलिसवाले बीसीसीआई के इस फ़ैसले से ज़रूर खुश हुए होंगे. फ़ैसला आईपीएल (इंडियन प्रीमियर लीग) को देश से बाहर कराने का. क्रिकेट जगत के अधिकारियों ने इस बात का ध्यान ही नहीं रखा था कि आईपीएल जैसे बड़े टूर्नामेंट के साथ ही अगर आम चुनाव भी टकरा गए, तो उनके तनाव का क्या हाल होगा. शुरुआत के लिए बता दें कि ललित मोदी ने 10 मार्च को आईपीएल मैचों के लिए पूरी सुरक्षा का भरोसा दिया था, लेकिन उनका यह भरोसेमंद बयान बिना गृह मंत्रालय से संपर्क किए ही मीडिया के सामने आया था. यह एकतरफा बयान इसलिए भी बचकाना था, क्योंकि सात दिन पहले ही, तीन मार्च को लाहौर में श्रीलंका की टीम पर आतंकी हमला हो चुका था. उनका यह बयान कि राज्य सरकारें गृह मंत्रालय को इसके बारे में सूचित करेंगी, मोदी के अज्ञान को ही दिखाती हैं. उनके बयान से यह साफ हो जाता है कि वह गृह मंत्रालय की संवैधानिक भूमिका के बारे में कुछ नहीं जानते हैं. इसी तरह की उलटबांसी तब भी स्पष्ट दिखी थी, जब ललित मोदी ने कथित तौर पर 24 मार्च को कहा था कि मंदी की मार से त्रस्त इंग्लैंड 100 मिलियन डॉलर के राजस्व का स्वागत ही करेगा, जो आईपीएल से पैदा होगा. बहुत जल्द ही टाइम्स ने ब्रिटिश पुलिस की आईपीएल कराने में हिचकिचाहट को प्रकाशित किया. टाइम्स ने यह ख़बर 22 मार्च को ताज़ा अल-क़ायदा हमलों की ब्रिटेन के गृहमंत्री जैक्री स्मिथ की चेतावनी के बाद प्रकाशित की थी.

लगभग 71 करोड़ 40 लाख मतदाता 16 अप्रैल से 13 मई तक पांच चरणों में होनेवाले आम चुनाव में अपने मताधिकार का प्रयोग करेंगे. इस दौरान पूरे देश में 828,804 बूथ बनाए जाएंगे. इसका मतलब यह हुआ कि 2004 के मुक़ाबले लगभग पांच करोड़ मतदाता और 20 फीसदी अधिक बूथ बनेंगे. आईपीएल के मालिकान की तरह शहरों में रहने वाले लोगों को इस चुनावी कार्य की गंभीरता और महत्ता का अंदाज़ा नहीं है. गृह मंत्रालय को चुनावी काम निपटाने के लिए राज्यों के 10 लाख पुलिसवालों का बल बनाना होगा, दो लाख जवानों को अतिरिक्त बलों (जैसे होम गार्ड) से चुनना होगा और केंद्रीय बल के सात लाख जवानों को भी तैनात करना होगा. इसी के साथ पुलिस बल के सामान्य कार्य, क़ानून और व्यवस्था के काम, उग्रवादी और माओवादी घटनाओं पर नज़र रखने के काम भी नहीं टाले जा सकते. खासकर तब, जब इस बार चुनाव-प्रचार का काम पिछली तमाम बार की तुलनाओं में कठिन होगा, क्योंकि त्रिशंकु संसद की संभावना बहुत अधिक है. छोटे दलों की बड़ी भूमिका और बिल्कुल नज़दीकी नतीजे आने की संभावना के मद्देनज़र मतदान के दिन बूथ पर कब्जा रोकने की घटनाओं को रोकने के लिए बेहद सावधानी से काम करने की ज़रूरत है.

देश के अलग-अलग हिस्सों में सांप्रदायिक हालात बिगड़ने के संकेत अभी से ही मिल रहे हैं. मुख्य चुनाव आयुक्त ने 16 मार्च को संकेत दिए कि वह मजबूरी में चुनावी काम के लिए और भी पुलिस बल की मांग कर सकते हैं. यही बात मुंबई के पुलिस कमिश्नर ने भी दोहराई, जिन्होंने उसी दिन कहा कि प्राथमिकता चुनावों को दी जानी चाहिए. हालांकि, आईपीएल के कर्णधारों ने अपना पुनरीक्षित कार्यक्रम (12 अप्रैल-9 मई) लीक हो जाने दिया. इसमें मुंबई में सात मैच होने थे. एक ऐसे शहर में, जो अब भी धीरे-धीरे 26 नवंबर के ज़ख्म से उबरने की कोशिश कर रहा है और जहां 30 अप्रैल को मतदान भी होना है. मुंबई की स्थानीय पुलिस की राय नहीं ली गई. यह इससे भी साफ है कि नागपुर पुलिस कमिश्नर ने अपनी टिप्पणी में कहा कि उनको अंदाज़ा ही नहीं था कि शहर में चार मैच होने हैं. नागपुर में 16 अप्रैल को वोटिंग होनी है. ऐसा लगता है कि आईपीएल के कर्णधारों ने सुरक्षा व्यवस्था को बेहद हल्के में ले लिया और स्थानीय पुलिस अधिकारियों से संपर्क नहीं किया. 16 मार्च को मीडिया में गृह मंत्रालय के एक अधिकारी का बयान (नाम न छापने की शर्त पर) आया, जिसमें उन्होंने अर्धसैनिक

लगभग 71 करोड़ 40 लाख मतदाता 16 अप्रैल से 13 मई तक पांच चरणों में होनेवाले आम चुनाव में अपने मताधिकार का प्रयोग करेंगे. इस दौरान पूरे देश में 828,804 बूथ बनाए जाएंगे. इसका मतलब यह हुआ कि 2004 के मुक़ाबले लगभग पांच करोड़ मतदाता और 20 फीसदी अधिक बूथ बनेंगे. आईपीएल के मालिकान की तरह शहरों में रहने वाले लोगों को इस चुनावी कार्य की गंभीरता और महत्ता का अंदाज़ा नहीं है.

बलों को आईपीएल मैचों के लिए उपलब्ध कराने से इनक़ार कर दिया. तथ्य तो यही है कि कई राज्य, जिनका नाम आईपीएल के कार्यक्रम में था, वह पूरी तरह केंद्रीय बलों पर रोज़ाना की क़ानून-व्यवस्था को संभालने के लिए भी निर्भर हैं. आईपीएल के कर्ता-धर्ता इस बात को शायद भूल गए कि सुरक्षा के लिए क्या कुछ ज़रूरी होता है. वह सोचते हैं कि पुलिस वाले रोबोट हैं और इच्छा के मुताबिक उनको कहीं भी नियुक्त किया जा सकता है. पुलिस बलों की भारी संख्या को दो या तीन के दल में बांट कर पोलिंग बूथ तक ले जाना, फिर आगे की ड्यूटी जैसे ईवीएम को सुरक्षित स्टोरेज केंद्र तक पहुंचाना, उन

केंद्रों की हिफ़ाज़त करना, मतदान के दौरान क़ानून-व्यवस्था बनाए रखना और नतीजों के बाद क़ानून का राज क़ायम रखना एक बहुत बड़ा काम और दायित्व है. इसी बीच, यही पुलिसवाले उन दूसरे इलाक़ों में भी जाएंगे, जहां मतदान होने वाला होगा, लेकिन अलग तारीख़ को. केंद्रीय बलों को पूरे देश में स्थानीय बलों की मदद के लिए भेजा जाएगा. लगातार यात्रा, गांवों में ठहरने की अनिश्चित जगह, अनजानी बातें जैसे, खाना, आराम और सबसे बढ़ कर सावधानी में शिथिलता की आशंका जैसे तत्वों का निश्चित तौर पर सैनिकों पर गहरा असर होगा.

आईपीएल इन्हीं थके हुए सैनिकों का इस्तेमाल आतंकी घटनाओं को रोकने के लिए करना चाहता था. सुरक्षा बलों ने निश्चय ही आईपीएल का बंदोबस्त कर दिया होता, बशर्ते उनको चुनावी काम पर नहीं लगाया गया होता. आईपीएल को शायद यक़ीन था कि निजी सुरक्षा एजेंसियों की सेवा वे ले लेंगे, लेकिन निजी सुरक्षाकर्मी कभी भी पुलिसकर्मियों की जगह नहीं ले सकते. यही वे पुलिसकर्मी हैं, जो चुनाव जैसे थका देनेवाले काम के बाद पूरी तरह सतर्क और सावधान नहीं रह पाएंगे.

लाहौर कांड के बाद कुछ भारतीय पर्यवेक्षकों ने कारण और परिणाम के सिद्धांत का सहारा लेकर निष्कर्ष निकाले, जिनको ग़लत तो होना ही था. एक विशेषज्ञ का मानना था कि श्रीलंका के क्रिकेटरों पर हमला लश्कर-ए-तैय्यबा और हरकत-उल-मुजाहिदीन के आतंकियों ने किया था. दूसरे ने कहा कि लश्कर का हाथ इस हमले में नहीं था, क्योंकि 26 नवंबर के बाद पाकिस्तान ने लश्कर पर शिकंजा कस दिया था. कुछ लेखों में यह कहा गया कि ये सारी अतार्किक धारणाएं हैं. यहां तक कि पाकिस्तानी विश्लेषक भी कहते हैं लिट्टे के पास इस तरह का घातक और तेज़ हमला करने की क्षमता नहीं है, क्योंकि वे खुद अपने छिपने के ठिकानों मे दुबके हुए हैं. लाहौर पुलिस के प्रमुख ने कहा कि हमला करनेवाले तालिबान पश्तूनों की तरह दिख रहे थे. हालांकि एशिया पैसेफिक फाउंडेशन के सफान गोहेल कहते हैं कि तालिबान अधिकतर आत्मघाती हमले करता है और लाहौर का हमला कहीं से भी फिदायीन हमला नहीं लगता. वह महसूस करते हैं कि तीन मार्च का हमला लश्कर के आतंकियों का काम हो सकता है, जो अपने नेताओं की गिरफ्तारी की वजह से पाकिस्तानी अधिकारियों से नाराज़ थे. एशिया टाइम्स के पाकिस्तान ब्यूरो के प्रमुख सैयद सलीम शाहज़ाद भी लश्कर पर ही शंका जाहिर करते हैं. वह कहते हैं कि पाकिस्तानी खुफिया अधिकारियों ने जमात-उत-दावा के प्रमुख हाफ़िज मोहम्मद सईद से मुलाक़ात कर उससे लाहौर की तरह के हमलों को रोकने की अपील की थी. वैसे, तो लाहौर के हमले के पीछे कोई कुंठित लश्कर सिपहसालार ही लगता है, जिस पर हाफिज़ का बस नहीं था. आईपीएल की सुरक्षा के मद्देनज़र हमें यह भी सोचना होगा कि आख़िर तीन मार्च को ग़लत क्या हुआ. लाहौर में कई सारी जानी या अनजानी सुरक्षा खामियां थीं. कहा गया कि लाहौर पुलिस ने केवल दो मोबाइल पुलिस स्कवॉड और मोटरसाइकिलों की ही तैनाती की थी. हालांकि वादा तो चार मोबाइल स्कवॉड और 12 मोटरसाइकिलों का था. मैच रेफरी क्रिस ब्रॉड ने कहा कि 20 कमांडो केवल होटल छोड़ते वक्त उनके साथ थे, लेकिन हमले के वक्त उनमें से कोई भी नहीं दिखा. हालांकि स्थानीय पुलिस इन आरोपों से इनक़ार करती है.

ग़ौर करने वाली बात यह है कि श्रीलंका की टीम पर हमला तीसरे दिन हुआ. शुरुआती दो दिनों तक उनकी टीम बस पाकिस्तान की टीम के साथ ही निकली थी. तीसरे दिन पाकिस्तान की टीम देर से निकली. शायद, दो दिनों तक आतंकियों ने टीम की सुरक्षा और उसकी कमियों का मुआयना किया. इसके साथ ही उन्होंने सुरक्षाकर्मियों को भी निश्चिंत होने का मौक़ा दिया. जब सुरक्षाकर्मी सतर्कता में ढील देने लगे, तो सही मौक़ा देख कर आतंकियों ने हमला बोल दिया. हमारे आईपीएल के कर्णधारों को भी इन सारी बातों का ध्यान रखना चाहिए, सुरक्षा पर खासी चिंता करनी चाहिए, जिसकी जाहिर तौर पर अब तक अनदेखी की जा रही है.

वी बालचंद्रन
feedback.chauthiduniya@gmail.com

[COVERT]

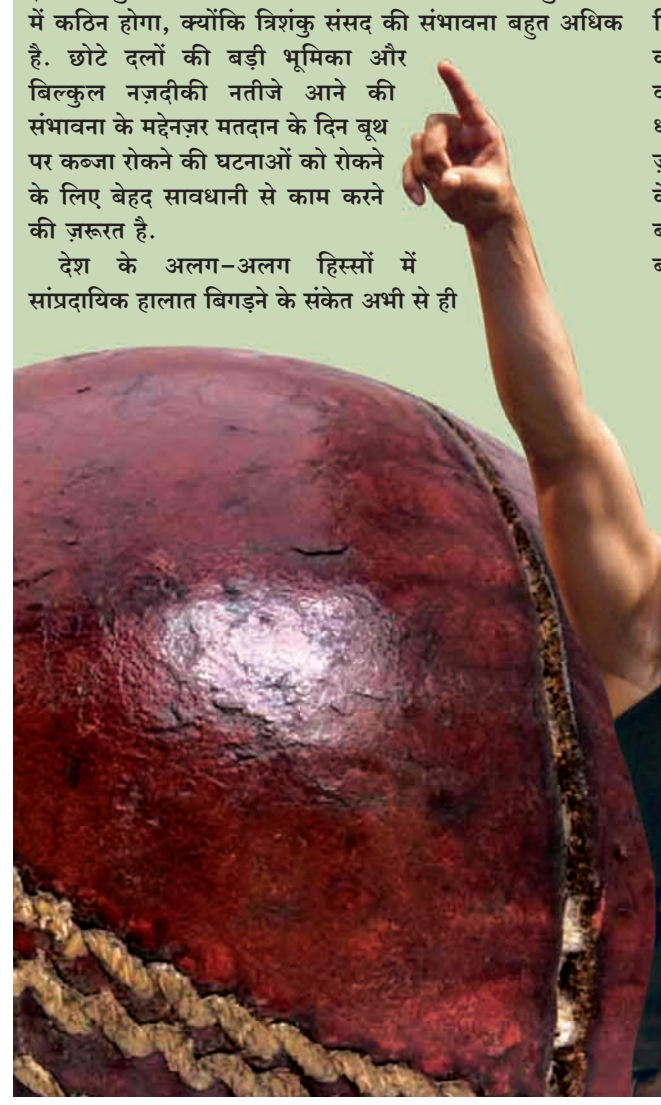

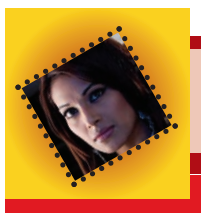

बिल्लो रानी के माथे पर चिंता की रेखाएं

बिपाशा को एशिया की सबसे सेक्सी महिला का खिताब मिला था, पर अब वह डरी हुई हैं, उनको अपनी पोजिशन पर ष्ठ तरा महसूस हो रहा है. आख़िर हो भी क्यों न, बिपाशा को टक्कर देने उनसे उमर में काफी छोटी छोरियां जो मैदान में आ गई हैं. बिप्स को डस्की, हस्की और सेक्सी जैसे विशेषणों के साथ जाना जाता है. वे बॉलीवुड में पार्टी एनिमल नाम से मशहूर हैं, लेकिन उन्होंने अब देर रात तक चलने वाली पार्टियों से तौबा कर ली है. बॉलीवुड में जहां कपड़ों की तरह प्रेमी-प्रेमिकाएं बदले जाते हैं, वहीं बिपाशा-जॉन की जोड़ी सबसे मज़बूत मानी जाती है. बिपाशा बसु इतनी लोकप्रिय होती जा रही हैं कि उन पर आधारित मोबाइल गेम शीघ्र लांच होने जा रहा है. इस गेम का नाम होगा - बिपाशा बसु जेट स्की चैंप और जल्द ही यह सभी नेटवर्क पर उपलब्ध होगा. बिपाशा बसु का ग्लैमर, उनकी सेक्स अपील और उनके अपने से कम उम्र के नायकों की नायिका के तौर पर फिट होने की चर्चा चारों ओर है. उनकी सेक्स अपील का अंदाज़ा तो इसी से लगाया जा सकता है कि 1996 में सुपर मॉडल का खिताब जीतने के बाद उन्हें 2007 में सेक्सी एशियन वूमेन से नवाजा गया. नौ साल पहले अब्बास मस्तान की फिल्म 'अजनबी' से अपने करियर की शुरुआत करने वाली बिपाशा ने फिल्म 'रेस' में खुद को ज़बरर्दस्त सेक्सी अभिनेत्री साबित कर दिया था. उनकी सेक्स अपील का ही तकाजा था कि वो बॉक्स ऑफिस की रेस जीत सकी तथा अब हिंदी फिल्मों की अभिनेत्रियों की रेस में सबसे आगे नज़र आने लगी हैं. बॉलीवुड की हॉट एंड सेक्सी, सांवली-सलोनी बंगाली बाला 'बिल्लो रानी' यानी बिपाशा बसु आजकल बेहद डरी हुई-सी हैं. फिल्मी पर्दे पर तो वह बिंदास किरदार निभाती हैं, मगर रीयल लाइफ में ऐसी नहीं है, जैसी नज़र आती हैं. वह बेहद चिंतित भी हैं. उनके मन में डर इस कदर बैठ गया है कि उन्होंने अपनी खाने-पीने की आदत तक बदल डाली. यह डर किसी आदमी या वस्तु से नहीं है. करीना ने साइज ज़ीरो का जो चक्कर शुरू किया था, अब बाकी हीरोइनें भी उसी राह पर चल पड़ी हैं और बिपाशा का दिल बैठा जा रहा है. दरअसल उन्हें बढ़ती उम्र का अहसास होने लगा है. जवान बने रहने के लिए उन्होंने अपनी खाने-पीने की आदतों को बदलने के साथ ही जिम में ज़्यादा देर तक समय गुज़ारना भी तय कर लिया है. और तो और, उन्होंने ऊर्जा के लिए विटामिन ई-सी, ओमेगा और कैल्शियम की गोलियां खानी शुरू कर दी है. वह इन दिनों अपने फेशियल और चेहरे पर भी ध्यान देने लगी है. अपनी आने वाली फिल्म 'पंख' के लिए भी उन्होंने अपना वजन काफी कम किया, जिसमें वह बला की खूबसूरत नज़र आ रही हैं. बिपाशा अपने लुक्स पर जंचने वाले फैशन को प्राथमिकता देती हैं. साथ ही वो इसके बारे में जॉन अब्राहम से भी राय-मशविरा करती रहती हैं.

जॉन अब्राहम डरे

बॉलीवुड अभिनेता जॉन अब्राहम को वर्ष 2008 का सबसे सेक्सी एशियाई व्यक्ति घोषित किया गया था. जॉन के प्रशंसकों में महिलाओं की संख्या ज्यादा है, क्योंकि उनकी बॉडी उनको बहुत आकर्षित करती हैं. इसलिए जॉन कम कपड़ों में नज़र आते हैं. जॉन फिटनेस के प्रति बेहद सजग है. वह अक्सर अपने प्रशंसकों को फिटनेस के महत्व का पाठ पढ़ाते रहते हैं. अपनी बॉडी को सुडौल बनाने के लिए जॉन ने हॉलीवुड ट्रेनर माइक रेयान की देखरेख में कसरत की थी. उनके बारे में इस तरह की निजी जानकारियां उन्हें खबरों के मार्केट में बनाए रखती है. जॉन अपनी सेक्स अपील से अच्छी तरह परिचित हैं, इसीलिए वह अपने लुक और शरीर पर खूब मेहनत करते हैं. बॉलीवुड हंक जॉन अब्राहम को आमिर खान से डर लगने लगा है. दरअसल जॉन अब्राहम गजनी में आमिर खान की बॉडी को देख कर घबरा गए हैं. हाल ही में ब्रिटिश पत्रिका ने जॉन अब्राहम को एशिया के सबसे सेक्सी पुरुष के खिताब से नवाजा था. उन्हें अब डर लगने लगा है कि कहीं आमिर खान उनके खिताब को छीन न लें. हम तो यही कहेंगे जॉन अब्राहम कि आप घबराएं नहीं, बल्कि सभी अभिनेताओं को आमिर खान के प्रोफेशनलिज़्म से सीख लेनी चाहिए. जॉन अब्राहम को आमिर खान से बेहतर बॉडी बनाने के लिए कड़े अभ्यास की जरूरत हैं.

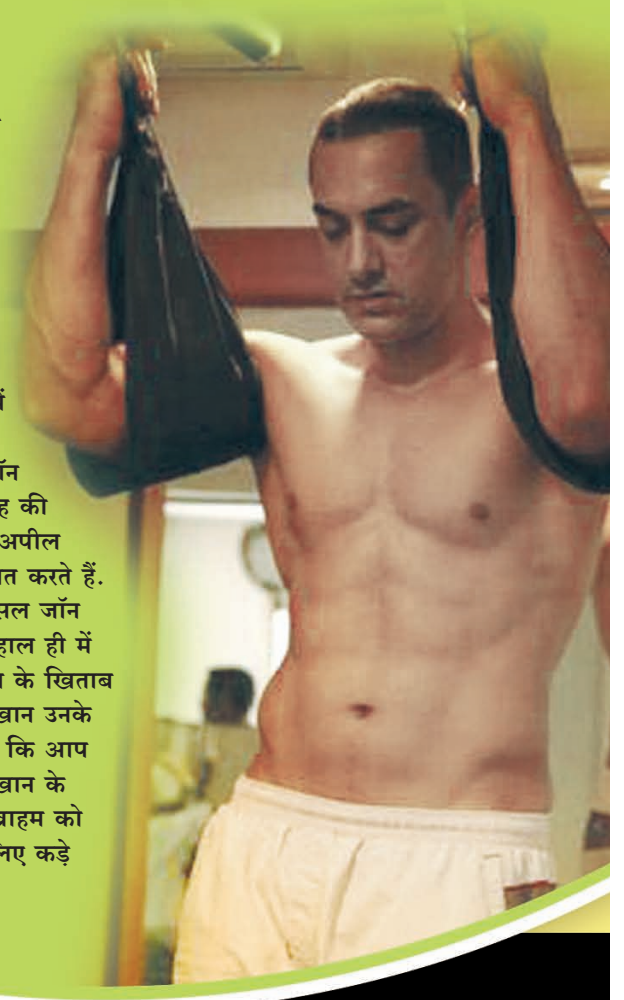

बिग-बी और नाना साथ-साथ

अमिताभ बच्चन और नाना एक साथ दोबारा फिल्मों में नज़र आने वाले हैं. उनकी आने वाली फिल्म का नाम 'क्रांतिवीर द रिवोल्यूशन' होगा. इस फिल्म का निर्देशन मेहुल कुमार करेंगे. यह फिल्म 'क्रांतिवीर' का सीक्वल है. इसमें नए कलाकारों को भी लिया गया है, क्योंकि फिल्म की कहानी नए और युवा कलाकारों की मांग करती है. मेहुल कुमार ने कहा कि स्थापित कलाकारों की एक अलग इमेज होती है. जबकि नए कलाकारों के साथ ऐसा नहीं रहता है. बिग-बी और नाना की 'कोहराम' ने दर्शकों गहरी छाप छोड़ी थी. दरअसल नाना सह कलाकारों के साथ रंग जमा देते हैं. 'तिरंगा', 'क्रांतिवीर' ऐसी ही फिल्म थी. दोनों महान अभिनेताओं की आने वाली फिल्म का दर्शकों को भी बेसब्री से इंतज़ार है.

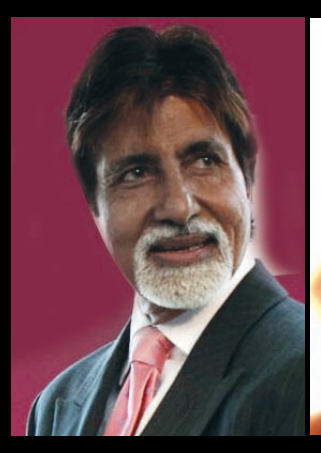

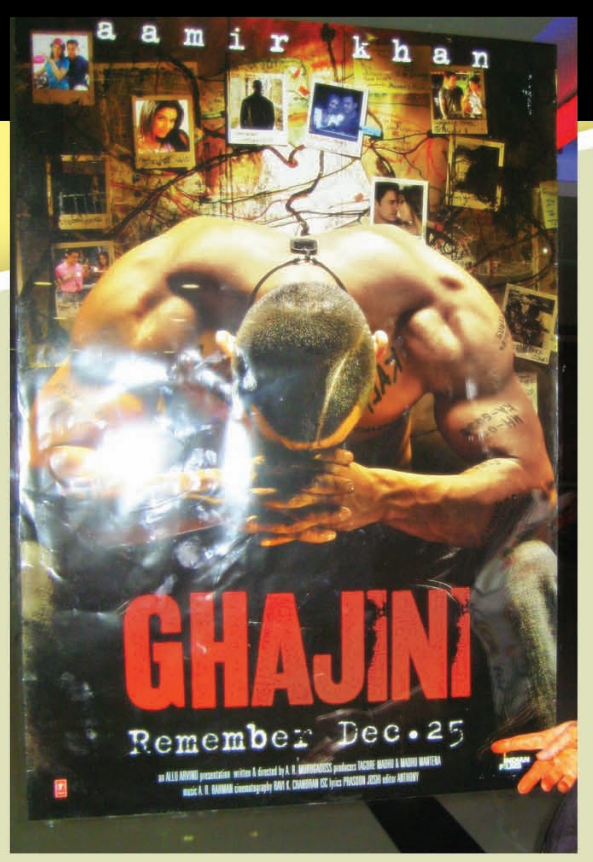

गजनी का अब होगा नेपाली में रीमेक

आमिर खान की 'गजनी' ने बॉलीवुड में पिछले साल धूम मचाई थी. भारतीय फिल्म इतिहास की सफलतम फिल्मों में से एक 'गजनी' को फिर प्रदर्शित किया जा रहा है. 'गजनी' आमिर खान के करियर की सबसे बड़ी हिट फिल्म साबित हुई. सबसे ज़्यादा रुपया और नाम बटोरने वाली इस फिल्म का मज़ा अब नेपाल के दर्शक भी उठा पाएंगे. वह भी अपनी भाषा, यानी नेपाली में. 'गजनी' नेपाल में 'गजेंद्र' के नाम से नेपाली दर्शकों के पास पहुंचेगी. गजेंद्र का निर्देशन नेपाली फिल्म के निर्देशक नारायण पुरी करेंगे. पुरी की हालिया फिल्म अल्पविराम भी वास्तविकता पर आधारित है. गजेंद्र फिल्म एक माओवादी और एक सैनिक की कहानी पर आधारित है. दोनों ही घायल होकर जंगल के एक घर में शरण लेते है. गजेंद्र में कल्पना की भूमिका 'गजनी' की अभिनेत्री असिन निभाएंगी. संजय की भूमिका के लिए अभिनेता श्रीकृष्ण श्रेष्ठ या निखिल उप्रेती का नाम सामने आ रहा है, जबकि गजेंद्र की भूमिका के लिए प्रसिद्ध अभिनेता राजेश हमल के बारे में अटकलें लगाई जा रही हैं. गजेंद्र का निर्माण गीता आर्ट्स द्वारा ही किया जाएगा, जिसने असली गजनी का निर्माण किया था.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback.chauthiduniya@gmail.com